सर्वजन हिताय

मानव-नीति पर आधारित रूपक

•

लेखक
यशपाल जैन

१९६७

सस्ता साहित्य मण्डल प्रकाशन

प्रकाशक

यशपाल जैन

मंत्री, सस्ता साहित्य मण्डल

एन-७७, कनॉट सर्कस, नई दिल्ली-११०००१

●

पहली बार : १९८७

मूल्य : रु० १०.००

●

मुद्रक

शुक्ला प्रिंटिंग सर्विस,

मौजपुर, दिल्ली-५३

उन साधकों को

जिनका मानवता में अटूट विश्वास है

और जो सबके हित-चिन्तन तथा

हित-साधन में सदा

संलग्न रहते हैं ।

—यशपाल जैन

प्रकाशकीय

हमारे देश में समय-समय पर अनेक विभूतियां हुई हैं, जिन्होंने मानव-जाति के कल्याण के लिए न केवल अपना संदेश दिया, अपितु ऐसे कार्य भी किये, जिनसे आज भी असंख्य व्यक्ति प्रेरणा प्राप्त करते हैं। भगवान महावीर, भगवान बुद्ध, हजरत मोहम्मद, गुरु नानक, महात्मा गांधी, आचार्य विनोवा, स्वामी विवेकानंद प्रभृति उसी कोटि के थे। उनके संदेश आज भी उतने ही सजीव हैं, जितने वे उनके समय में थे।

इस पुस्तक में चुने हुए धर्म-पुरुषों महावीर, बुद्ध, नानक जैसे धर्म-उन्नायकों तथा महात्मा गांधी, आचार्य विनोवा, स्वामी विवेकानंद जैसे युग-पुरुषों के महान संदेशों पर आधारित कुछ रूपक संग्रहीत किये गए हैं। इनमें से अधिकांश रूपक रेडियो पर प्रसारित हो चुके हैं। कहने की आवश्यकता नहीं कि कथ्य की दृष्टि से तो ये रूपक वोधप्रद हैं ही, भाव-भाषा तथा शैली की दृष्टि से भी अत्यन्त प्रभावशाली हैं।

हमें पूरा विश्वास है कि इस पुस्तक को जो भी पढ़ेगा, उसे लाभ ह होगा।

—मंत्री

दो शब्द

मुझे बड़ी प्रसन्नता है कि मेरे कतिपय रूपकों का यह संग्रह पाठकों के हाथों में पहुंच रहा है। अपनी रचनाओं के विषय में विस्तार से कुछ कहना लेखक के लिए आवश्यक नहीं रह जाता, कारण कि उसे जो कुछ कहना होता है, उसे रचनाएं स्वयं कह देती हैं। फिर भी मैं इतना निवेदन कर देना चाहता हूं कि इस पुस्तक में संकलित रूपक मुझे विशेष प्रिय हैं। इनके दो कारण हैं। पहला तो यह कि इनके लिखने में मुझे बड़े आनन्द की अनुभूति हुई है। दूसरे, इनके माध्यम से मैंने उन विचारों तथा आदर्शों को पाठकों के सामने रखने का प्रयत्न किया है, जो शाश्वत हैं और जिनमें मानव के लिए कल्याणकारी संदेश है। बुद्ध, महावीर, मोहम्मद, नानक, विवेकानंद, गांधी, विनोबा प्रभृति ने जो कुछ दिया है, वह सबके लिए है और उसका महत्त्व सार्वकालिक है। इन रूपकों में से प्रायः सभी में पाठक इन्हीं विचारों और आदर्शों की झांकी पायेंगे। बुद्ध की करुणा, महावीर की अहिंसा, गांधी का प्रेम और विनोबा में इस त्रिवेणी का संगम, सारी मानव-जाति के लिए प्रेरणा का अक्षय स्रोत है।

आज हमारा देश ही नहीं, समूचा जगत् मूल्यों के संकट का सामना कर रहा है। महत्त्वाकांक्षा, पद और सत्ता के आगे मानव और मानव-नीति गौण हो गयी है। हमारे शास्त्रकारों ने मानव को सर्वश्रेष्ठ प्राणी कहा था। उन्होंने उसे पदों से ऊंचे स्थान पर प्रतिष्ठित किया था। पर आज पद बड़ा हो गया है और मनुष्य छोटा। पद और पदार्थ के मोह के कारण आज चारों ओर क्लेश और अशान्ति दिखाई देती है।

इस पुस्तक के रूपक पाठकों को क्षणभर सोचने के लिए प्रेरित करते हैं, साथ ही वे उस मार्ग की ओर इंगित करते हैं, जिस पर चलकर मनुष्य, समाज और राष्ट्र स्थायी शान्ति और सुख प्राप्त कर सकते हैं।

इन रूपकों को वैसे तो जो भी पढ़ेंगे, उन्हें कुछ-न-कुछ लाभ अवश्य होगा, लेकिन मेरा मानना है कि यह पुस्तक नयी पीढ़ी के लिए, जिसके ऊपर समाज और राष्ट्र का भविष्य निर्भर करता है, विशेष उपयोगी सिद्ध होगी। वे इसमें उस समाज की झलक पायेंगे, जिसके स्वप्न हमारे महापुरुष निरंतर देखते आये हैं और जिसकी नव-रचना अब हमारी नयी पीढ़ी ही कर सकती है।

इस संग्रह के अधिकांश रूपक आकाशवाणी के विभिन्न केन्द्रों से प्रसारित मेरे रूपकों में से चुने गये हैं। रेडियो-रूपकों की अपनी मर्यादा होती है। उनमें दर्शक सामने नहीं होते। अभिनेता स्वर के द्वारा उनके पास पहुंचते हैं। इसीसे मानव-स्वरों को अधिकाधिक प्रभावशाली बनाने के लिए बीच-बीच में संगीत तथा वाद्य-ध्वनि का सहारा लेना पड़ता है। यही कारण है कि इन रूपकों में पाठकों को जगह-जगह पर वाद्य-ध्वनि का उल्लेख मिलेगा।

यद्यपि ये रूपक आकाशवाणी के लिए लिखे गये हैं, तथापि मुझे विश्वास है कि थोड़े-बहुत परिवर्तन के साथ इन्हें मंच पर भी खेला जा सकता है।

७/८ दरियागंज,
नई दिल्ली ११०००२

—यशपाल जैन

अनुक्रम

□

□□

१ : सर्वजन हिताय

[धीमे-धीमे हर्ष-सूचक वाद्य-ध्वनि। थोड़ा उतार-चढ़ाव। समाप्त होने के पूर्व]

उद्घोषक : हमारे देश की भूमि बड़ी उर्वरा है। उसने समय-समय पर ऐसे महापुरुष उत्पन्न किये हैं, जिनकी प्रतिभा ने भारत को ही नहीं, सारे संसार को चमत्कृत कर दिया है। हमारा इतिहास इसका साक्षी है कि जब-जब यहां की पावन भूमि पर अंधकार छाया है, प्रकाश-पुंज के रूप में किसी-न-किसी महापुरुष का उदय हुआ है, और उसने अंधकार को छिन्न-भिन्न कर दिया है।

पुरुष-स्वर : बुद्ध, महावीर, नानक, गांधी, विनोबा आदि को कौन नहीं जानता! उन्होंने अपने समय की बुराइयों के विरुद्ध संघर्ष किया और जन-जन का हित-साधन करने के लिए बहुत-से असामान्य कार्य किये।

[आशा तथा आनंद-सूचक वाद्य ध्वनि]

उद्घोषक : (गंभीर पर दुःख-सूचक स्वर में)
उन्नीसवीं शताब्दी में भारत के प्रांगण में घोर अंधकार छा गया था। विदेशी सत्ता ने स्वतंत्रता के लिए किये गए संग्राम का दमन कर दिया था। राष्ट्रीय गौरव समाप्त हो गया था। भारतवासियों के दिलों में निराशा घर कर बैठी थी। कुछ लोगों ने तो अंग्रेजी सभ्यता की चकाचौंध में अपने देश के इतिहास को ही भुला दिया था और पश्चिम के रंग में अपने को रंग लिया था। अचानक...

[हर्ष-सूचक वाद्य-ध्वनि। आरोह-अवरोह के बाद धीरे होते ही]

उद्घोषक : अचानक एक अत्यन्त तेजस्वी प्रकाश का उदय हुआ। उसने अपने तेज से अपने देश को ही नहीं, सारी दुनिया को आलोकित कर दिया।

स्त्री-स्वर : (उमंग से भरकर) यह प्रकाश था—स्वामी विवेकानंद। उन्होंने देश के कोटि-कोटि नर-नारियों को सोते से जगाया।

पुरुष-स्वर : उन्हें आशा का संदेश दिया।

स्त्री-स्वर : उनमें स्वाभिमान पैदा किया।

पुरुष-स्वर : उन्होंने नौजवानों को प्रेरणा दी कि वे उठें और दीन-दुखियों की सेवा में अपने को अर्पित कर दें।

स्त्री-स्वर : उन्होंने कहा :

पुरुष-स्वर : (धीर-गभीर ढंग से)
"जिस शान्ति को तुम पाना चाहते हो वह शान्ति तुम्हें आंखें बंद करने से नहीं मिलेगी। अगर तुम सच्ची शान्ति पाना चाहते हो, तो

आंखें खोलकर देखो कि तुम्हारे आस-पास कौन है, कौन गरीबी और बेबसी की हालत में पड़ा है और किस रोगी-अपाहिज को सहायता की आवश्यकता है। अपनी शक्ति भर उसकी सहायता करो। यही ईश्वर की सच्ची सेवा है, इसी से तुम्हें शान्ति मिलेगी।"

[देर तक हर्ष और आशा की द्योतक वाद्य-ध्वनि। उसके धीमे पड़ते ही]

उद्घोषक : स्वामी विवेकानंद का जन्म कलकत्ते के निकट सियुलिया नामक स्थान पर मकर संक्रांति के दिन, १२ जनवरी १८६३ को, विश्वनाथ दत्त के घर हुआ था। बालक का नाम नरेन्द्र नाथ रक्खा गया। उनके माता-पिता ने बड़े लाड़-प्यार से अपने इकलौते बेटे का पालन-पोषण किया। उनकी बुद्धि बड़ी तीव्र थी। वह पढ़ने में और खेल-कूद में अपने साथियों से हमेशा आगे रहते थे।

स्त्री-स्वर : किन्तु बचपन से ही उनके मन में भांति-भांति के प्रश्न उठते थे।

पुरुष-स्वर : वह जानना चाहते थे कि इस संसार की सृष्टि किसने की है?

स्त्री-स्वर : वह यह भी जानना चाहते थे कि कौन-सी शक्ति है, जो हमसे सारे काम कराती है?

पुरुष-स्वर : उनके मन में यह जानने की जिज्ञासा थी कि ईश्वर कौन है? कैसा है? वह दिखाई क्यों नहीं देता?

स्त्री-स्वर : इन प्रश्नों का उत्तर पाने के लिए उन्होंने ब्राह्म

समाज की सभाओं में जाना आरंभ किया, किन्तु उनकी जिज्ञासाओं का समाधान नहीं हुआ।

पुरुष-स्वर : तभी किसी ने उन्हें दक्षिणेश्वर में रहने वाले स्वामी रामकृष्ण परमहंस के पास जाने की सलाह दी। वह जाने को तैयार हो गये।

स्त्री-स्वर : संयोग से एक दिन रामकृष्ण परमहंस से कलकत्ता में ही उनकी भेंट हो गई। उन्होंने निश्चय किया कि वह उनके पास जाकर कुछ दिन रहेंगे और देखेंगे कि वह जो कुछ कहते हैं, कहां तक सच कहते हैं और कहां तक उस पर आचरण करते हैं ?

पुरुष-स्वर : नरेन्द्र उनके पास गए। रामकृष्ण ने उन्हें देखते ही कहा, "तू कहां था ? मैं कब से तेरी प्रतीक्षा कर रहा था !"

स्त्री-स्वर : कहते-कहते रामकृष्ण का गला भर आया। वह रोने लगे। कुछ देर तक उनके मुंह से शब्द नहीं निकला। फिर हाथ जोड़कर उन्होंने कहा :

पुरुष-स्वर : "मैं जानता हूं, तुम 'नर' ऋषि के अवतार हो और संसार के जीवों के कल्याण के लिए तुमने शरीर धारण किया है।"

[वाद्य-ध्वनि। आनंद-सूचक]

उद्घोषक : यह सब सुनकर नरेन्द्र चकित रह गये। वह रामकृष्ण के पास प्राय: जाने लगे। वह तरह-तरह से उनकी परीक्षा लेते थे, पर रामकृष्ण कभी विचलित नहीं हुए। उनकी सहिष्णुता और बच्चों जैसी निश्छल मुक्त हंसी ने उन्हें सदा के लिए जीत लिया। रामकृष्ण भी उनके प्रति

गहरी आत्मीयता रखने लगे। इसी बीच नरेंद्र के पिता का देहान्त हो गया। घर-गृहस्थी का सारा भार उनके ऊपर आ गया, उनकी कड़ी परीक्षा हुई। उनके संबंधियों ने उनकी धन-सम्पत्ति पर अपना अधिकार कर लिया। वह पैसे-पैसे के लिए तंग हो गये।

स्त्री-स्वर : एक दिन तो उनके घर में खाने को अन्न का एक दाना भी नहीं था। नरेन्द्र भूखे ही सो गये। जागे तो मां ने कहा, "अरे, तेरा भगवान किस काम का है, जो पेटभर खाना भी नहीं दे सकता!"

पुरुष-स्वर : नरेन्द्र का हृदय चीत्कार कर उठा। वह रामकृष्ण के पास गये और उनसे सारा हाल कहकर अनुरोध किया कि आप मेरे लिए माता-जी से प्रार्थना कर दीजिये। घर का यह कष्ट मुझसे देखा नहीं जाता।

स्त्री-स्वर : रामकृष्ण हैरान हुए, पर कर करते क्या! उन्होंने कहा :

पुरुष-स्वर : "अपने लिए, तुम आप मांगो। मंदिर में जाओ। जो चाहो, मांग लो। मुंह-मांगा मिलेगा।"

उद्घोषक : नरेन्द्र को मूर्ति के सामने जाकर कुछ याचना करने की बात से संकोच हुआ, किन्तु रामकृष्ण ने बहुत जोर डाला तो वह काली माता के मंदिर में अपने परिवार का दुःख दूर करने के लिए विनती करने गये, पर देखते क्या हैं कि उनके सामने मूर्ति नहीं है, साक्षात् जगदम्बा खड़ी हैं। उनसे सांसारिक कोई भी चीज मांगना उन्हें उचित नहीं लगा। उन्होंने हाथ फैलाया, पर

किसलिए ? विवेक, ज्ञान और वैराग्य के लिए।

स्त्री-स्वर : लौटकर रामकृष्ण के पास आये और सारी बात कह सुनाई। रामकृष्ण ने हंसकर कहा :

पुरुष-स्वर : "अरे, मैं जानता था कि तुम कोई छोटी-मोटी चीज मां से नहीं मांग सकोगे। अच्छा जाओ, मां की मर्जी होगी तो तुम्हारे घर में खाने-पीने की कमी नहीं रहेगी।"

[आशा-सूचक वाद्य-ध्वनि]

उद्घोषक : रामकृष्ण का कहना सच निकला। जिस मुकदमे ने नरेन्द्र को परेशान कर रक्खा था, उसमें उनकी जीत हो गई। उन्होंने और भी कुछ काम-धन्धे किये। उनमें आमदनी होने लगी और घर का काम ठीक चलने लगा। लेकिन नरेन्द्र का मन उस सबमें नहीं रमा। उनकी इच्छा थी कि घर-वार छोड़कर रामकृष्ण के पास चले जायं और उन्हीं की सेवा में अपना जीवन व्यतीत करें।

पुरुष-स्वर : इस बीच रामकृष्ण परमहंस के गले में कैंसर हो गया। नरेन्द्र ने दक्षिणेश्वर के पास काशीपुर में एक मकान किराये पर ले लिया। उसी में रहकर वह रामकृष्ण की सेवा करते और भजन-उपदेश सुनते।

पुरुष-स्वर : कुछ ही दिनों में नरेन्द्र ने संन्यास ग्रहण कर लिया।

स्त्री-स्वर : उन्होंने घर-वार छोड़ दिया और अपने गुरु की सेवा में लीन हो गये। साथ ही इतिहास, शास्त्र

आदि का अध्ययन करने लगे।

[वैराग्य-सूचक ध्वनि]

उद्घोषक : रामकृष्ण की हालत दिनों-दिन गिरती गई। उनके गले में बड़ा कष्ट था। वह कुछ खा-पी नहीं सकते थे। एक दिन नरेन्द्र और उनके साथियों ने उनसे कहा :

पुरुष-स्वर : "आप मां से प्रार्थना कीजिये कि वह आपके कष्ट को दूर कर दें, आपकी व्याधि को मिटा दें।"

उद्घोषक : बहुत आग्रह करने पर रामकृष्ण जगदम्बा से विनती करने के लिए राजी हो गए। कुछ समय पश्चात् शिष्यों ने पूछा तो उन्होंने उत्तर दिया :

पुरुष-स्वर : "मैंने मां से कहा था कि मैं कुछ खा नहीं सकता ! गले से कुछ भी नीचे उतारने में मुझे बड़ी तकलीफ होती है, तो मां ने तुम सबकी ओर संकेत करके कहा :

स्त्री-स्वर : 'अरे, इतने मुंह से तो तू खाता है।'

पुरुष-स्वर : अब बताओ इसके आगे मैं क्या कहता !"

[वाद्य ध्वनि। मंगन-सूचक। उतार-चढ़ाव]

उद्घोषक : रामकृष्ण समझ गये कि अब उनकी काया अधिक दिन नहीं चलेगी। सब शिष्य भी जान गये। अंत समय निकट आ गया। उन्होंने नरेन्द्र को एकान्त में अपने पास बुलाया। उनके आने पर वह समाधि में लीन हो गये। नरेन्द्र को अनुभव हुआ, मानो उनके शरीर में बिजली का प्रवेश हो रहा है। वह कांपने लगे। संज्ञाशून्य हो गये। होश आया तो उन्होंने देखा कि रामकृष्ण की

आंखों से आंसुओं की धारा बह रही है। उन्होंने विवेकानंद से कहा :

पुरुष-स्वर : "आज तुझे सबकुछ देकर मैं फकीर हो गया हूं। अब जबतक मेरा काम पूरा नहीं होता, तुझे छुट्टी नहीं मिलेगी।"

उद्घोषक : १६ अगस्त १८८६ को रामकृष्ण परमहंस का निधन हो गया।

[शोकसूचक वाद्य-ध्वनि]

उद्घोषक : विवेकानंद का शिष्य-मण्डली में सबसे ऊंचा स्थान था। उन्होंने अपने सहयोगियों के साथ निश्चय किया कि अपना शेष जीवन अपने गुरु के कार्य को पूरा करने में लगा देंगे। गुरु का काम था :

स्त्री-स्वर : सारे प्राणियों की सेवा करना। उनके जीवन को सुखी बनाना।

पुरुष-स्वर : काशीपुर के पास उन्होंने वराहनगर में एक छोटा-सा मकान किराये पर ले लिया और पहला रामकृष्ण-आश्रम स्थापित किया। अब वह नरेन्द्र से विवेकानन्द हो गये। वह गुरु के उपदेशों का प्रचार करने लगे। यह काम एक स्थान पर रहकर नहीं हो सकता था। उन्हें जो ज्ञान के बीज अपने गुरु से प्राप्त हुए थे, उन्हें देश भर में विखेरना आवश्यक था।

उद्घोषक : वह देश के प्रमुख तीर्थों की यात्रा पर निकल गये। पहली यात्रा उन्होंने वैद्यनाथ धाम की की, फिर काशी गये। वहां उन्हें एक विचित्र अनुभव हुआ। वह विश्वनाथ के दर्शन करके वाहर आये,

तो उनके पीछे बन्दर लग गये। विवेकानंद के अंगरखे की जेबें पुस्तकों से फूली थीं। बंदरों को लगा कि उनमें खाने की कुछ चीजें हैं। बंदरों को पीछे आते देखकर वह डर गये और भागे। वह पसीना-पसीना हो गये। तभी किसी संन्यासी ने ललकार कहा :

पुरुष-स्वर : "यह क्या कर रहे हो ? भागो मत। सामना करो।"

उद्घोषक : फिर क्या था ! स्वामीजी डटकर खड़े हो गये। बंदर भी खड़े हो गये और थोड़ी देर में वहां से भाग गये। इस घटना से उन्हें बोध हुआ कि बुराई से भागने पर वह पीछा करती है। अपने इस अनुभव के आधार पर आगे उन्होंने कहा, "पशुओं का सामना करो, अविद्या का सामना करो, माया का सामना करो। उनसे डरकर भागो मत।"

[आशा-सूचक वाद्य-ध्वनि]

उद्घोषक : सारे देश में घूमकर उन्होंने लोगों की दशा को अपनी आंखों से देखा और देशवासियों से कहा :

पुरुष-स्वर : "तुमने पढ़ा है, 'मातृ देवोभव, पितृ देवोभव।' मैं कहता हूं—'दरिद्र देवोभव, भूख देवोभव। गरीबों, अशिक्षितों, अज्ञानियों और पीड़ितों को अपना ईश्वर मानो। उनकी सेवा करना ही उच्चतम धर्म है।"

स्त्री-स्वर : उन्होंने यह भी कहा :

पुरुष-स्वर : "जबतक करोड़ों व्यक्ति भुखमरी और अज्ञान

का जीवन व्ययतीत करते हैं, मैं प्रत्येक देश-वासी को देशद्रोही ठहराता हूं, जो उन पर भार बनकर शिक्षित होते हैं और उनकी ओर तनिक भी ध्यान नहीं देते।"

स्त्री-स्वर : उन्होंने लोगों की चेतना को झकझोरते हुए यह भी कहा :

पुरुष-स्वर : "दूसरों की थोड़ी सेवा भी अंतर-शक्ति को जागृत करती है, यहां तक कि दूसरों की भलाई का तनिक चिन्तन भी धीरे-धीरे हृदय में सिंह का-सा बल उत्पन्न कर देता है। प्रतिज्ञा करो कि तुम अपना सम्पूर्ण जीवन उन कोटि-कोटि व्यक्तियों का उद्धार करने में लगाओगे, जो प्रतिदिन नीचे गिरते जा रहे हैं।"

उद्घोषक : ३१ मई १८९३ में स्वामीजी अमरीका गये। वहां शिकागो में सर्व-धर्म-सम्मेलन का आयोजन किया गया था। स्वामीजी उसमें सम्मिलित हुए। वहां उन्हें भारतीय सांस्कृतिक के स्वर को संसार में मुखरित करने का अवसर मिला। उनके पहले भाषण ने ही पाश्चात्य विद्वानों की आंखें खोल दीं। उन्होंने वहां के लोगों को बताया :

पुरुष-स्वर : "भारत की पहली आवश्यकता धर्म नहीं है। वहां इस गिरी हुई हालत में भी काफी धर्म मौजूद हैं। भारत की सच्ची बीमारी भूख है। अगर आप भारत के हितैषी हैं तो उसके लिए धर्म-प्रचारक नहीं, अन्न भेजिए।"

स्त्री-स्वर : उन्होंने यह भी कहा :

पुरुष-स्वर : "मैं प्रेम, केवल प्रेम का, उपदेश दे सकता हूं। मेरी यह धारणा इस सत्य पर आधारित है कि विश्व की आत्मा एक और सर्वव्यापी है।"

उद्घोषक : स्वामीजी का व्यक्तित्व बड़ा सौम्य था। उनकी वाणी में बड़ा ओज था। उनके ये शब्द लोगों के दिलों में घर गये :

पुरुष-स्वर : (बड़ी गंभीरता से) "पहले रोटी, फिर धर्म। जबकि लोग भूखों मर रहे हैं, हम उनके मस्तिष्क में धर्म ठूंस रहे हैं! भूख की तिल-मिलाहट को कोई भी दर्शन संतुष्ट नहीं कर सकता।"

स्त्री-स्वर : उनके ये शब्द तो आज भी आकाश में गूंज रहे हैं :

पुरुष-स्वर : "मैं ऐसे धर्म या परमेश्वर में विश्वास नहीं करता, जो विधवाओं की आंखों के आंसू नहीं पोंछ सकता या जो अनाथों के मुंह में रोटी का एक टुकड़ा भी नहीं रख सकता।"

[प्रेरक वाद्य-ध्वनि, धीमे होने पर]

उद्घोषक : संसार में अपने देश का मस्तक ऊंचा करके विवेकानंद भारत लौटे। उनकी सफलता का पराधीन भारतवासियों के मन पर भी गहरा प्रभाव पड़ा। उनकी आंखें खुलीं, उनका खोया आत्म-विश्वास लौटा। उन्होंने रामकृष्ण मिशन का विस्तार किया। देश-विदेश में उन्होंने आश्रमों का जाल बिछा दिया। उनमें निःस्वार्थ भाव से सेवा करने के लिए अनगिनत साधु-संन्यासियों का समुदाय एकत्र हुआ।

स्त्री-स्वर : रामकृष्ण मिशन के इन आश्रमों में सेवा का जो आदर्श प्रस्तुत किया गया और आज भी किया जा रहा है, वह अभूतपूर्व है।

पुरुष-स्वर : उनके विशाल पुस्तकालय जहां ज्ञान का प्रसार करते हैं, वहां उनके अस्पताल रोगियों की समुचित चिकित्सा करते हैं।

स्त्री-स्वर : जब भी और जहां भी सेवा की आवश्यकता होती है, संस्था के साधु-संन्यासी वहां तत्काल पहुंच जाते हैं।

उद्घोषक : उन्होंने अपने देश की ही नहीं, विश्व की चेतना को जाग्रत करने के लिए आह्वान किया :

पुरुष-स्वर : "प्रत्येक आत्मा में दैवी शक्ति विद्यमान है। व्यक्ति का लक्ष्य यह होना चाहिए कि वह अपनी आंतरिक प्रवृत्ति को नियंत्रित करके उस दैवी शक्ति को अपने अंतर में प्रस्फुटित करें।"

स्त्री-स्वर : स्वामीजी परम पुरुषार्थी थे। उन्हें प्रमाद से घृणा थी। वह चाहते थे कि प्रत्येक व्यक्ति वलवान वने। एक वार एक दुवला-पतला नौजवान उनके पास आया और वोला :

पुरुष-स्वर : "स्वामीजी, मुझे कुछ उपदेश दीजिये।"

स्त्री-स्वर : विवेकानंद ने उसकी ओर देखा और कहा :

पुरुष-स्वर : "जाओ, पहले मैदान में फुटवाल खेलो। शरीर को मजवूत वनाओ। तब गीता पढ़ना।"

स्त्री-स्वर : वह अभ्यास पर वड़ा जोर देते थे। कहते थे :

पुरुष-स्वर : "अभ्यास अत्यन्त आवश्यक है। तुम प्रतिदिन घंटों मेरे पास वैठकर मेरी वातें सुन सकते हो,

लेकिन यदि तुम स्वयं अभ्यास नहीं करोगे तो एक कदम भी आगे नहीं बढ़ पाओगे। जबतक स्वयं अभ्यास नहीं करोगे तबतक किसी भी बात को गहराई से नहीं समझ सकोगे।"

[उद्बोधन-सूचक वाद्य-ध्वनि]

उद्घोषक : स्वामीजी सोलह वर्ष तक देश-विदेश में खूब घूमे और लोगों को सेवा के लिए प्रेरित किया। उनके लिए धर्म-विश्वास, जात-पांत, आचार-विचार का कोई भेदभाव नहीं था। वह सबको समान मानते थे। सबके लिए प्रेम और आदर रखते थे। सबका भला चाहते थे, सबकी सेवा करने की आकांक्षा उनके दिल में हिलोरें लेती रहती थी। वह भारत माता से कहते थे :

पुरुष-स्वर : "जननी, मैं मुक्ति नहीं चाहता। तुम्हारी सेवा ही मेरा एकमात्र धर्म है, कर्म है।"

स्त्री-स्वर : उन्होंने धम को सेवा का पर्यायवाची माना और उसे जीवन के साथ जोड़ा। उनका मानना था कि जो दूसरों की सेवा करता है, वह अपने कर्त्तव्य का तो पालन करता ही है अपने जीवन को धन्य बनाता है।

[वाद्य-ध्वनि]

उद्घोषक : अपने जीवन के अंतिम दो वर्षों में वह अधिकतर बैलूर मठ में ही रहे। लगातार भ्रमण करने से उनका शरीर थक गया था। पर अपने मठ में भी वह निष्क्रिय होकर नहीं बैठे। निरन्तर कर्मरत रहे। लगभग चालीस वर्ष की आयु में ४ जुलाई १९०२ को उनके प्राण-पखेरू उड़ गये।

[शोक सूचक वाद्य-ध्वनि। उसका आरोह-अवरोह कुछ देर तक चले और अंत में उसके धीमे पड़ते ही]

उद्घोषक : स्वामीजी चले गये, पर मानव-जाति के कल्याण के लिए उन्होंने जो कार्य किये, वे मानवता के इतिहास में स्वर्णाक्षरों में अंकित रहेंगे। उन्होंने देशवासियों को जो संदेश दिया, वह आज भी प्रेरणा देता है। उन्होंने कहा :

पुरुष-स्वर : (धीरे-धीरे) "लम्बी रात अब बीत गई जान पड़ती है और दुःखों का अंत होता दीख पड़ता है। मौत की बेखबरी में सोया हुआ मुर्दा मानो जाग रहा है। जो अंधे हैं, वे देख नहीं सकते और जो पागल हैं, वे समझ नहीं सकते कि हमारी मातृभूमि अपनी गहरी नींद से उठ रही है। अब कोई भी उसकी उन्नति को रोक नहीं सकता। अब वह और नहीं सोयेगी। कोई बाहरी शक्ति उसे अब दबा नहीं सकती। यह देखो, भारतमाता धीरे-धीरे आंखें खोल रही है। वह कुछ ही देर सोई थी !"

[आशा-सूचक वाद्य-ध्वनि]

स्त्री-स्वर : और सम्पूर्ण देशवासियों का आह्वान करते हुए उन्होंने कहा :

पुरुष-स्वर : "उठो, उठो, और पहले से अधिक बड़प्पन और आदर देकर, पूरी भक्ति के साथ, भारत माता को उसके उस सिंहासन पर बिठा दो, जिस पर वह सदा ही विराजमान रही है।"

[अंतिम शब्दों के पूरे होने से पहले ही वाद्य-ध्वनि आरम्भ हो जाय और कुछ समय तक उद्बोधन देती चलती रहे।]

२ : 'जीओ और जीने दो' के मन्त्रदाता

[हल्की वाद्य-ध्वनि । उसकी पृष्ठभूमि में]

गूंज : **अज्झत्थं सव्वओ सव्वं, दिस्स पाणे पियायए ।**
न हणे पाणिणो पाणे भयवेराओ उवरए ।।

[आशासूचक वाद्य-ध्वनि : उसके मन्द पड़ते-पड़ते]

पुरुष-स्वर : आनेवाले सुखों या दुःखों का मूल अपने ही अन्दर है, ऐसा जानकर भय और वैर से निवृत्त साधक का कर्त्तव्य है कि जीवन के प्रति मोह-ममता रखनेवाले सब प्राणियों को सर्वत्र अपनी ही आत्मा के समान जानकर उसकी कभी भी हिंसा न करे ।

[वाद्य-ध्वनि]

उद्घोषक : (**गम्भीर स्वर में**) सुखों और दुःखों का मूल अपने अन्दर है...सब प्राणियों को अपने समान समझो...कभी भी हिंसा न करो...(**अल्प विराम**) ।...कितना सुन्दर है यह सन्देश, कितना लोकहितकारी, कितना प्रेरणा-दायक ! ऐसा प्रतीत होता है, मानो किसी महापुरुष ने

मानव-जीवन को सार्थक बनाने का मूलमंत्र दे दिया है। जानते हैं, इस मंत्र के दाता कौन थे? वह थे जैनधर्म के चौबीसवें तीर्थंकर महावीर, जिनका आविर्भाव आज से ढाई हजार वर्ष पूर्व हुआ था, लेकिन जिनके उपदेश आज भी उतने ही ताजा हैं, जितने उस समय थे।

पुरुष-स्वर १ : जिस समय वह इस भूमि पर पैदा हुए थे, चारों ओर गहन अंधकार छाया था, हिंसा का बोलबाला था।

पुरुष-स्वर २ : यज्ञों में पशुओं की बलि दी जाती थी। लोग मानते थे कि यज्ञ की वेदी को खून में जितना लाल किया जायगा, उतना ही अधिक पुण्य मिलेगा।

पुरुष-स्वर ३ : सामाजिक नियम नष्ट-भ्रष्ट हो चुके थे। आचार-विचार का कोई मूल्य नहीं रहा था। बुरी-बुरी रूढ़ियां समाज में घर कर गयी थीं।

पुरुष-स्वर १ : वर्णभेदों की जड़ें गहरी हो गयी थीं। लोग अपने-अपने तंग दायरों में सीमित हो गये थे। उनमें ऊंच-नीच का भाव पैदा हो गया था।

पुरुष-स्वर २ : स्वार्थ के वशीभूत होकर लोग दूसरों के हितों पर प्रहार कर रहे थे। उनके दिलों से प्रेम का लोप हो गया था।

पुरुष-स्वर ३ : समाज का राजदण्ड अत्याचार के हाथ में जा पड़ा था और सत्ता अहंकार तथा महत्त्वाकांक्षा की दासी वन गयी थी।

[शोकसूचक वाद्य-ध्वनि]

उद्घोषक : कहते हैं, जब-जब इस धरा पर धर्म की हानि होती है, तब-तब कोई-न-कोई महापुरुष जन्म लेता है और समाज का उद्धार करता है। उस काल की महाव्याधियों को दूर करने के लिए वैशाली गणतंत्र के कुण्ड-ग्राम में एक बालक पैदा उत्पन्न हुआ। उसके जन्म से पिता सिद्धार्थ और माता त्रिशला तो हर्षित हुईं ही, सारे राज्य में आनन्द की लहर दौड़ गयी।

[हर्षबोधक वाद्य-ध्वनि]

पुरुष-स्वर १ : जब से बालक गर्भ में आया था, तभी से परिवार की सुख-समृद्धि में वृद्धि होती रही थी।

पुरुष-स्वर २ : बालक का विकास पूर्णिमा के चन्द्रमा की भांति होने लगा था।

पुरुष-स्वर ३ : इसलिए उसका नाम वर्द्धमान रखा गया। बालक बड़ा हुआ। एक दिन कुछ बच्चे बस्ती से बाहर खेल रहे थे।

[बच्चों का कोलाहल। उसके धीमे पड़ने पर]

बालक १ : (विस्मय से) अरे, उधर देखो, वह क्या है ?

बालक २ : (डर से कांपती आवाज में) सांप...सांप..., भागो...भागो।

बालक ३ : ओफ, कितना काला है वह ! कितना भयंकर !

बालक ४ : उसका फन देखकर जान सूखती है। जीभ को ऐसे लपलपाता है कि सबको खा जायगा।

[बालकों के भागकर दूर चले जाने की आवाज]

वर्द्धमान : (निडर स्वर में) अरे, तुम लोगों को यह क्या हो

गया है ? सांप है तो है, इसमें डरने की क्या बात है !

[आगे बढ़ने की चाप]

कई बालक : (घबराकर) ओ वर्द्धमान, यह क्या करते हो ? उधर मत जाना, सांप तुम्हें डंस लेगा।

[वर्द्धमान के हंसने का स्वर]

वर्द्धमान : नहीं, वह मुझे नहीं डसेगा, नहीं डसेगा।

उद्घोषक : वर्द्धमान मुस्कराते हुए बेधड़क उस विषधर की ओर बढ़े और पास जाकर उसका मुंह पकड़ लिया। फिर, दूर जाकर उसे छोड़ आये। उनके साथी चकित रह गये। घर के लोगों को मालूम हुआ तो उनके प्राण मुंह को आ गये। छोटी उम्र में बालक का वह साहस वास्तव में अद्भुत था। उन्होंने उस दिन से बालक का नाम महावीर रख दिया। उसकी तेजस्विता को देखकर पिता की इच्छा हुई कि बड़े होने पर वह राजपाट संभालेगा और उनका नाम ऊंचा होगा, लेकिन महावीर की रुचि राजपाट और उसके वैभव में नहीं थी। उनकी लौ तो कहीं और ही लगी थी।

[शोकसूचक वाद्य-ध्वनि]

पुरुष-स्वर १ : पिता ने बड़ी ममता से उनका लालन-पालन किया और भरपूर कोशिश की कि उनका मन राजकाज में लगे।

पुरुष-स्वर २ : लेकिन उस छोटी उम्र में ही महावीर देख रहे थे कि लोग धर्म के असली मर्म को भूलकर कर्म-काण्ड में फंस गये हैं। उन्हें यह देखकर बड़ी वेदना होती थी कि लोग जान-बूझकर गड्ढे में

गिर रहे हैं।

पुरुष-स्वर ३ : जिस प्रकार दुनिया के दुःखों को देखकर गौतम बुद्ध का मन संसार से हट गया था, उसी प्रकार महावीर भी बुराइयों को देखकर दुनिया से उदासीन हो गये।

पुरुष-स्वर १ : वह ऐसा सुख चाहते थे, जो मनुष्य के जीवन को सदा हरा-भरा रखे और जिसके मिल जाने पर और कुछ पाने की चाह न रहे।

[वाद्य-ध्वनि। उसके उतार-चढ़ाव के बाद]

उद्घोषक : जब महावीर २८ वर्ष के हुए, तो उनके मां-बाप का बिछोह हो गया। महावीर के एक बड़े भाई थे नन्दिवर्द्धन। वह बड़े दुखी हुए, लेकिन महावीर पर माता-पिता के जाने का कोई असर न पड़ा। उन्होंने बड़े भाई को समझाकर कहा कि जीना और मरना तो संसार का नियम है। उसके लिए शोक क्या करना! महावीर दो साल घर में और रहे। उसके बाद वह तीस वर्ष की आयु में घरबार छोड़कर जंगल में चले गये।

[विषादभरी वाद्य-ध्वनि]

पुरुष-स्वर १ : अब उन्हें किसी से न राग था, न द्वेष।

पुरुष-स्वर २ : वह बालक की भांति निर्मल और निर्विकार हो गये।

पुरुष-स्वर ३ : वन में उन्होंने बड़ी कठोर तपस्या की।

पुरुष-स्वर १ : जो मिल जाता, खा लेते।

पुरुष-स्वर २ : जहां जगह मिल जाती, पड़े रहते।

पुरुष-स्वर ३ : तन पर उनके कपड़ा नहीं था। बच्चे उन्हें नंगा

देखकर उन पर धूल फेंकते, पत्थर मारते।

उद्घोषक : लेकिन महावीर धीरज से सब सहते रहे, सहते रहे। उनको शरीर की सुधि नहीं थी। वह शरीर को आराम पहुंचानेवाली सब चीजों का त्याग कर चुके थे। बाहरी वर्ष तक उनकी तपस्या इसी प्रकार चलती रही। इन वर्षों में उन पर क्या-क्या बीती, किन-किन मुसीबतों का उन्हें सामना करना पड़ा, इसकी कहानियां सुनकर दिल दहल उठता है। एक बार घूमते हुए वह एक गांव में पहुंचे। वहां एक यक्ष रहता था। वह किसी और का वहां रहना सहन नहीं कर सकता था। लोगों ने महावीर को समझाया कि वह वहां न जायं, लेकिन वह नहीं माने। रात को यक्ष आया।

[किसी के जोर से आने का स्वर]

यक्ष : (क्रोध भरे स्वर में) तू कौन है ?

[खामोशी]

यक्ष : (गरजकर) अरे, बोलता क्यों नहीं ? यहां मेरा राज्य है। तूने यहां आने की कैसे जुर्रत की ?

[खामोशी]

उद्घोषक : कहते हैं, जब यक्ष ने देखा कि महावीर पर उसके क्रोध का कोई प्रभाव नहीं पड़ा तो वह सांप बन गया और लगा उन्हें बार-बार काटने। महावीर फिर भी अडिग रहे। अन्त में यक्ष ने समझ लिया कि वह कोई सामान्य व्यक्ति नहीं है। वह उनके पैरों पर गिर पड़ा और उनसे क्षमा मांगने लगा। महावीर ने कहा :

महावीर : "हे यक्ष ! जिस प्रकार तुम्हारे आत्मा है, उसी प्रकार दूसरों के भी आत्मा है। इस बात को समझो और किसी को भी दुःख न पहुंचाओ।"

यक्ष : "प्रभो, मैंने अपने जीवन में बड़े पाप किये हैं।"

महावीर : "उनके लिए पश्चात्ताप करो और आगे के लिए संकल्प करो कि कोई पाप नहीं करोगे। इसी से तुम्हारा कल्याण होगा।"

[कल्याणबोधक वाद्य-ध्वनि]

उद्‌घोषक : एक बार एक ग्वाले ने उन्हें बहुत सताया। इंद्र आये। उन्होंने महावीर की रक्षा करना चाहा, लेकिन महावीर ने इन्कार कर दिया। उन्होंने कहा :

महावीर : "आप चिन्ता न करें। साधक किसी की मदद नहीं लेते। वे अपना बचाव आप कर लेते हैं।"

[आनन्दकारी ध्वनि]

उद्‌घोषक : कुन्दन बनने के लिए सोने को तपना पड़ता है। महावीर की भी बड़ी कड़ी कसौटी हुई। बारह, वर्ष बाद उनकी तपस्या सफल हुई। एक दिन ऋजुकूला नदी के किनारे, शाल वृक्ष के नीचे, उन्हें 'केवल-ज्ञान' प्राप्त हो गया। वह जन्म-मरण, शोक-संताप, सुख-दुःख और संसार के माया-जाल से मुक्त हो गये।

[आनन्ददायक वाद्य-ध्वनि]

पुरुष-स्वर १ : इसके बाद वह एक जगह नहीं रहे। तीस वर्ष तक बराबर घूमकर उपदेश देते रहे।

पुरुष-स्वर २ : उनकी धर्म-सभा में हर आदमी आ सकता था। उनके लिए आदमी-आदमी के बीच किसी

प्रकार का भेदभाव नहीं था।

पुरुष-स्वर ३ : वह कहते थे :

महावीर : "हर व्यक्ति जीना चाहता है। सबको अपना-अपना जीवन प्यारा है। सब सुखी रहना चाहते हैं। दुःख से दूर रहना चाहते हैं। इसीलिए किसी भी प्राणी को मनसा-वाचा-कर्मणा कष्ट नहीं पहुंचाना चाहिए।"

पुरुष-स्वर १ : उन्होंने अहिंसा को परम धर्म माना और कहा :

महावीर : "अहिंसा से ही मनुष्य सुखी हो सकता है— अहिंसा से ही संसार में शान्ति बनी रह सकती है।"

पुरुष-स्वर २ : उन्होंने अहिंसा का मर्म समझाते हुए कहा :

महावीर : "अपनी बुराइयों को जीतना, अपनी इंद्रियों पर काबू रखना और किसी भी चीज से मोह न करना ही सच्ची अहिंसा है।"

पुरुष-स्वर ३ : अहिंसा के साथ-साथ उन्होंने संयम, तप और त्याग पर बड़ा जोर दिया।

पुरुष-स्वर १ : बारह वर्ष के कठोर तप के बाद अपनी अनुभूति से उन्होंने सीख दी :

महावीर : "सबसे पहले अपने को कसो, अपने को शुद्ध बनाओ।"

पुरुष-स्वर २ : उन्होंने पंच महाव्रत की महिमा बतायी :

महावीर : "किसी भी जीव को न सताओ, सदा सच बोलो, चोरी न करो, संयम रखो, आवश्यकता से अधिक चीजें न बटोरो और उन चीजों के मोह-जाल में न फंसो।

पुरुष-स्वर ३ : उन्होंने यह भी कहा :

महावीर : "दुनिया में दुःख की जड़ मनुष्य का अहंकार है, अर्थात् मनुष्य मानता है कि वह जो कहता है, वही सही है। इससे बड़े झगड़े होते हैं।"

पुरुष-स्वर १ : उन्होंने दुनिया को एक अत्यन्त उपयोगी सिद्धान्त दिया, जिसे अनेकान्त कहते हैं।

पुरुष-स्वर २ : इसका अर्थ है कि हम जो कहते हैं, वही सच नहीं है। दूसरे जो कहते हैं, उसमें भी सचाई है। हर चीज के कई पहलू होते हैं। लोग चीजों को अपने पहलू से देखते हैं और अपनी बात कहते हैं। इसीलिए किसी को मताग्रह नहीं रखना चाहिए। कहना चाहिए कि मैं जो कहता हूं वह ही सच नहीं है, वह भी सच है।

पुरुष-स्वर ३ : लेकिन उनका सबसे बड़ा मंत्र था :
'जीओ और जीने दो', अर्थात् मनुष्य अपनी तरह दूसरों का भी ध्यान रखे और उन्हें वे सब सुविधाएं दे, जो वह अपने लिए चाहता है।

[प्रेरणादायक वाद्य-ध्वनि]

गूंज : **आत्मनः प्रतिकूलानि परेषां न समाचरेत।**

[वाद्य-ध्वनि। उसी की पृष्ठभूमि में]

पुरुष-स्वर १ : जिस चीज को तुम अपने प्रतिकूल मानते हो, उसका आचरण दूसरों के प्रति मत करो।

[वाद्य-ध्वनि]

पुरुष-स्वर २ : उनका कहना था :

महावीर : "मानव मानव एक समान हैं। सबको आत्मोन्नति करने का अधिकार है। मनुष्य की श्रेष्ठता का आधार जन्म नहीं, गुण है और

गुणों के आधार पर ही मनुष्य का जीवन सार्थक बनता है।

पुरुष-स्वर ३ : उन्होंने अपने उपदेश बड़ी ही सरल और सुबोध भाषा में दिये :

महावीर : "जिस तरह मूर्ख गाड़ीवान जान-बूझकर साफ-सुथरे रास्ते को छोड़कर ऊंचे-नीचे, ऊबड़-खाबड़ रास्ते पर जाता है और गाड़ी की धुरी टूट जाने पर शोक करता है, उसी तरह मूर्ख मनुष्य धर्म को छोड़कर अधर्म ग्रहण कर, अन्त में मौत के मुंह में पड़कर, जीवन की धुरी टूट जाने पर शोक करता है।"

पुरुष-स्वर १ : उन्होंने यह भी कहा :

महावीर : "जो मनुष्य प्राणियों की स्वयं हिंसा करता है, दूसरों से करवाता है और हिंसा करनेवालों का अनुमोदन करता है, वह संसार में अपने लिए वैर बढ़ाता है।"

पुरुष स्वर २ : उन्होंने प्रमाद के विरुद्ध कितने सरल शब्दों में चेतावनी दी :

महावीर : "जैसे पतझड़ आने पर पेड़ का पत्ता पीला होकर गिर जाता है, वैसे ही मनुष्य का जीवन आयु समाप्त होने पर नष्ट हो जाता है। इसलिए क्षणभर भी प्रमाद न करो।"

पुरुष-स्वर ३ : उन्होंने अपनी बात को समझाते हुए एक दूसरी उपमा दी :

महावीर : "जैसे ओस की बूंद घास की नोक पर थोड़ी देर तक ही रहती है, वैसे ही मनुष्य का जीवन भी अत्यन्त अल्प है। शीघ्र ही नष्ट हो जाने-

वाला है। इसलिए तनिक भी आलस न करो।"

पुरुष-स्वर १ : आगे वह कहते हैं :

महावीर : "तू विशाल संसार-समुद्र को तैर चुका है। अब भला किनारे आकर क्यों अटक रहा है? उस पार पहुंचने के लिए जितनी हो सके, उतनी जल्दी कर।"

उद्घोषक : उन्होंने एक-से-एक बढ़कर उपदेश दिये। उन्होंने कोई विषय ऐसा नहीं छोड़ा, जिस पर प्रकाश न डाला हो। उन्होंने सबसे अधिक जोर आत्म-विजय पर दिया। उनके शब्द थे :

महावीर : "अपनी आत्मा को जीतना चाहिए। एक आत्मा को जीत लेने पर सबकुछ जीत लिया जाता है।"

पुरुष-स्वर २ : उन्होंने जीवन के अथाह सागर में डुबकी लगाकर बहुमूल्य रत्न निकाले और उन्हें मानव-जाति को दिया।

महावीर : "जो अपना भला चाहता है उसे पाप बढ़ाने-वाले क्रोध, मान, माया औरलोभ—इन चार दोषों को सदा के लिए छोड़ देना चाहिए।

[अल्पविराम]

"क्रोध प्रीति का नाश करता है, मान विनय का, माया मित्रता का और लोभ सभी अच्छे गुणों का।

[प्रेरक वाद्य-ध्वनि]

"शान्ति से क्रोध को मारो, नम्रता से अधिकार को जीतो, सरलता से माया का नाश करो और

संतोष से लोभ को काबू में लाओ।

[अल्प विराम]

"जिसे मोह नहीं, उसे दु:ख नहीं, जिसे तृष्णा नहीं, उसे मोह नहीं, जिसे लोभ नहीं, उसे तृष्णा नहीं, जिसके पास लोभ करने योग्य कोई पदार्थ-संग्रह नहीं, उसमें लोभ भी नहीं।

[वाद्य-ध्वनि]

"काल बड़ी तेजी से दौड़ा जा रहा है। जीवन की एक-एक करके सारी रातें बीतती जा रही हैं। काम-भोग हमेशा रहनेवाले नहीं हैं। भोग-विलास के साधनों से रहित पुरुष को भोग वैसे ही छोड़ देते हैं, जैसे बिना फल वाले वृक्ष को पक्षी।

[अल्प विराम]

"यह शरीर पानी के बुलबुले के समान क्षण-भंगुर है। पहले या बाद में, एक दिन इसे छोड़ना ही है। इसलिए इसके प्रति मुझे तनिक भी आसक्ति नहीं है। स्त्री, पुत्र, मित्र और बन्धु-जन सब जीते-जी के ही साथी हैं। मरने पर कोई भी साथ नहीं जाता।"

[वाद्य-ध्वनि]

पुरुष-स्वर : जीवन के सत्य को उन्होंने इन शब्दों में उजागर किया :

महावीर : "संसार में जितने भी प्राणी हैं, वे सब अपने किये कर्मों के कारण दु:खी होते हैं। अच्छा या बुरा, जैसा भी कर्म हो, उसका फल भोगे बिना छुट-

कारा नहीं ।

[वाद्य-ध्वनि]

गूंज : **नर चाहे तो निज कर्मों से नारायण बन सकता है।**
सारे स्वर्गों के समस्त सुख पृथ्वी पर ही पा सकता है।

है स्वर्ग-नर्क कुछ नहीं, जहां मानव मरकर जाया करता।
अपने-अपने कर्मों का फल, प्रत्येक यहां पाया करता।।
यदि सुख की अभिलाषा है तो इंद्रिय-निग्रह को अपनाओ ।
माया से दूर सदैव रहो, अल्पादि परिग्रह ठुकराओ ।।

[वाद्य-ध्वनि। उसके उतार-चढ़ाव के साथ]

उद्घोषक : समस्त प्राणियों को जीने और दूसरों को जीने देने का मार्ग बताते हुए, सब पर अमृत की वर्षा करते हुए, महावीर पावा आये और चातुर्मास करने के लिए वहीं ठहर गये। एक-एक करके तीन मास बीत गये। चौथा भी आधा बीत गया। कार्तिक की अमावस्या के दिन उनका अन्तिम उपदेश हुआ। रात्रि के पिछले प्रहर में उन्हें निर्वाण-पद प्राप्त हो गया।

[भावपूर्ण वाद्य-ध्वनि—उसमें उतार-चढ़ाव और अन्त में उसी की पृष्ठभूमि में]

गूंज : **जत त्रिशालानन्दन, हरिकृत वन्दन,**
जगदानन्दन चन्द्रवरम् ।
भवतापनिकन्दन, तनमनवन्दन,
रहितसपन्दन नयनधरम ।।

[वन्दना-बोधक वाद्य-ध्वनि] ●

३ : "वाह गुरुजी !"

[हल्की-हल्की वाद्य-ध्वनि । उसी की पृष्ठि-भूमि पर]

पुरुष-स्वर : ॐकार सति नामु करता पुरखु निरभऊ
निरवैरु अकाल मूरति अजूनी सैभं गुर
प्रसादि ।।
आदि सचु जुगादि सचु है भी सचु
नानक भी सचु ।।

[अध्यात्म-सूचक वाद्य-ध्वनि]

उद्घोषक : कितनी महान है यह वाणी ! कितनी मधुर ! कितनी प्रेरक ! गुरु की कृपा से बढ़कर और क्या है ! गुरु यानि जिसका नाम सत्य है, जो सबका सृष्टा है, जो समर्थ है, निर्भय है, निर्वैर है, जिसका अस्तित्व कालातीत है, जिसका जन्म नहीं है, जो स्वयंभू है ।...

[मधुर वाद्य-ध्वनि]

उद्घोषक : ये हैं गुरु नानक के सबद—उन गुरु नानक के, जिन्होंने अन्याय और अत्याचार के विरुद्ध अपनी आवाज ऊंची की, प्यार का महत्त्व बताया, धर्म

के असली रूप को उजागर किया और जिन्होंने सच्चे सुख का रास्ता दिखाया।

[आशा-सूचक वाद्य-ध्वनि]

स्त्री-स्वर : आज से पांच सौ साल पहले कैसा था वह समय! शासक बड़े निर्दयी थे। अपनी प्रजा पर मनमाने अत्याचार करते थे। लोगों को सताते थे। आपसी प्यार और भाईचारा नहीं रहा था। धर्म कोरा दिखावा रह गया था। मनुष्य मनुष्य के बीच फासला पैदा हो गया था। इंसानियत को भुला दिया गया था।

पुरुष-स्वर : ऐसे समय में पंजाब के तलवंडी नामक गांव के पटवारी मेहता कल्याणदास के यहां १५ अप्रैल १४६९ को एक बालक का जन्म हुआ। वह अपने नाना के यहां पैदा हुआ था, इसलिए उसका नाम 'नानक' रक्खा गया, उसकी बहन नानकी कहलाई।

स्त्री-स्वर : पांच वर्ष की अवस्था में नानक की शिक्षा आरंभ कराई गई। उनकी बुद्धि इतनी तेज़ थी कि पढ़ाने वाले भी उनकी करामात देखकर चकित रह जाते थे। उन्हें जो कुछ पढ़ाया जाता था, वह तत्काल याद हो जाता था।

पुरुष-स्वर : थोड़े ही समय में उन्होंने पंजाबी, हिन्दी, संस्कृत और फारसी भाषाएं सीख लीं।

स्त्री-स्वर : लेकिन जैसे-जैसे वह बड़े होने लगे, उनका ध्यान पुस्तकों पर से हटने लगा। उनके गांव के पास जंगल था। वह उस जंगल में जाकर बैठ जाते और चिन्तन में डूब जाते। घंटों डूबे रहते।

पुरुष-स्वर : यह देखकर उनके माता-पिता को बड़ी चिन्ता हुई। उनका ध्यान उधर से हटाने के लिए उन्होंने घर की भैंसों को चराने का काम उनको सौंप दिया, पर उसमें उनका मन नहीं लगा।

स्त्री-स्वर : तब घर की खेती की देखभाल का काम उन्हें दिया, लेकिन नानक तो अपने में ही मस्त थे। वह खेत पर बैठते और चिन्तन में इतने लीन हो जाते कि इधर-उधर से ढोर आकर उनकी फसल को नष्ट कर जाते।

पुरुष-स्वर : विवश होकर पिता ने उन्हें कुछ रुपये दिये और कुछ ऐसा धंधा करने को कहा, जिससे कुछ लाभ हो, लेकिन तलवंडी के जंगल में नानक को कुछ साधु मिले, जो भूखे थे। नानक के पास जो रुपये थे, उनसे उन्होंने खाने की कुछ चीजें खरीदीं और साधुओं को दे दीं। उन्होंने सोचा कि भूखों को अन्न देने से अधिक लाभ की बात और क्या हो सकती है!

[हर्ष-सूचक वाद्य-ध्वनि]

उद्घोषक : पिता को जब यह समाचार मिला तो उन्हें बड़ा क्रोध आया। उन्होंने नानक को खूब पीटा, पर उससे उनका स्वभाव कहां बदलने वाला था! ऐसी एक-दो नहीं, अनेक घटनाएं उनके जीवन में घटीं। एक बार एक साधु को न सिर्फ उन्होंने अपने पास का पैसा दे दिया, बल्कि ध्यान आने पर उंगली की अंगूठी भी उतार कर दे दी। उनके पिता सिर पीटकर रह गये। अपने उस इकलौते

बेटे की इन हरकतों ने उन्हें गहरी चिन्ता में डाल दिया।

पुरुष-स्वर : पिता को रात-दिन चिन्तित देखकर उनकी बेटी नानकी अपने भाई को सुलतानपुर ले गई। वहां नानक के बहनोई ने उन्हें नवाब के भण्डार में काम पर लगवा दिया। उस समय वेतन रुपयों में नहीं दिया जाता था। नवाब और राजा अपना लगान अनाज के रूप में लेते थे। वही अनाज हाकिमों और सिपाहियों को जरूरत के हिसाब से दे दिया जाता था।

स्त्री-स्वर : एक बार नानक भण्डार से आटा तौल रहे थे। तौलते-तोलते तेरह की गिनती आई तो नानक खो गये। वह बड़ी देर तक 'तेरा-तेरा' करते रहे और आटा देते रहे। नतीजा यह हुआ कि जितना आटा उन्हें देना था, उससे कहीं अधिक आटा उन्होंने दे दिया। फिर तो जो होना था, वही हुआ। उन्हें अपनी नौकरी से हाथ धोने पड़े।

[दुख-सूचक वाद्य ध्वनि]

उद्घोषक : उन्नीस साल की उम्र में नानक का विवाह कर दिया गया। उनके दो पुत्र हुए। ज्येष्ठ पुत्र श्रीचंद्र बड़े होने पर ऊंचे दर्जे के महात्मा बने और देश के विभिन्न भागों में घूम-घूमकर दीन-दुखियों की सहायता करते रहे, उन्हें धीरज बंधाते रहे। छोटे पुत्र लक्ष्मीचंद गृहस्थ [illegible]।

छोटे लड़के के जन्म [illegible] कुछ [illegible] बाद नानक में मन वैराग्य [illegible]

कि घर-बाहर और पत्नी-बच्चों को छोड़कर देश के विभिन्न भागों में घूमने लगे।

[वैराग्य-सूचक वाद्य-ध्वनि]

स्त्री-स्वर : चौबीस-पच्चीस साल तक वह देश-विदेश में घूमते ही रहे। पंजाब में वह पीरों और फकीरों से मिले। पीरों से तो उनकी इतनी दोस्ती हो गई कि वह आगे चलकर उनके साथ मक्का गये।

उद्घोषक : गुरु नानक का पहनावा बड़ा विचित्र था। लोग उसे देखकर समझ नहीं पाते थे कि वह हिन्दू हैं या मुसलमान। वह सिर पर मुसलमान फकीरों जैसी टोपी लगाते थे। माथे पर हिन्दुओं की भांति तिलक लगाते थे और गले में माला पहनते थे। लोग कुछ भी समझें, पर उनका धर्म तो था सत्य और ईश्वर की उपासना। इन्हीं का प्रचार उन्होंने देश-देशान्तर में किया।

स्त्री-स्वर : उनके उपदेश हिन्दू, मुसलमान सब बड़े प्रेम और भक्ति से सुनते थे।

पुरुष-स्वर : नानक ने चार लम्बी यात्राएं कीं जो 'चार उदासियों' के नाम से विख्यात हैं। पहली उदासी पूर्व की ओर, दूसरी दक्षिण की ओर, तीसरी उत्तर की ओर और चौथी पश्चिम की ओर।

स्त्री-स्वर : मरदाना नाम का एक साथी इनकी यात्राओं में बराबर साथ रहा। नानक गाते थे, वह बाजा बजाता था। इस तरह गाते-बजाते ये लोग जगह-जगह घूमते रहे।

पुरुष-स्वर : घूमते-घूमते वे एक बार सैयदपुर पहुंचे और वहां एक बढ़ई के घर ठहरे। बढ़ई शूद्र माना जाता था। इसलिए ब्राह्मणों और खत्रियों ने तूफान मचा दिया। चारों ओर उनकी बुराई होने लगी। नानक को मालूम हुआ तो उन्होंने कहा, "ब्राह्मण और शूद्र का भेद व्यर्थ है। गरीब की रोटी अधिक पवित्र है, क्योंकि उसके पीछे पसीने की कमाई है। उसमें दूध भरा रहता है। अमीर की रोटी में से खून निकलता है, क्योंकि उसके पीछे गरीबों का शोषण होता है।"

स्त्री-स्वर : एक बार गुरु नानक किसी सभा में लम्बा प्रवचन करके आये। उन्हें प्यास लगी। उन्होंने शुद्ध पानी मांगा। एक धनिक दौड़ा-दौड़ा गया और चांदी के गिलास में पानी ले आया। नानक की निगाह गिलास लेते-लेते उसके हाथ पर गई। बड़ा चिकना हाथ था। नानक ने कहा :

पुरुष-स्वर : "अरे, तुम्हारा हाथ तो बहुत साफ है।"

स्त्री-स्वर : उसने समझा कि गुरु नानक उसकी प्रशंसा कर रहे हैं। वह बोला :

पुरुष-स्वर : "गुरुजी, मेरे यहां बहुत-से नौकर-चाकर हैं। मुझे कुछ भी अपने हाथ से नहीं करना पड़ता।"

स्त्री-स्वर : गुरु नानक ने गिलास नीचे रख दिया। कहा :

पुरुष-स्वर : "जिन हाथों में कठोर काम करने से ठेकें नहीं पड़ी हैं, उन हाथों का पानी पवित्र नहीं हो सकता।"

स्त्री-स्वर : गुरु नानक ने अनेक अंध-विश्वासों पर चोट की। एक बार वह उपदेश देते हुए हरिद्वार आये। वहां मेला लगा था। सवेरे ही वह गंगा-स्नान

करने गये। बहुत-से लोग नहा रहे थे। कुछ पितरों का तर्पण कर रहे थे। यह देखकर गुरु नानक किनारे पर बैठकर पश्चिम की ओर मुंह करके पानी उलीचने लगे। लोगों ने देखा तो कहा कि तर्पण पश्चिम की ओर मुंह करके नहीं, पूर्व की ओर मुंह करके किया जाता है। नानक ने उत्तर दिया :

पुरुष-स्वर : "मैं पश्चिम का रहनें वाला हूं। वहां मेरी खेती-बारी है। मैं उसी को सींच रहा हूं।"

स्त्री-स्वर : यह सुनकर लोग हंस पड़े। बोले "भले, आदमी, यहां का पानी इतनी दूर कैसे पहुंच सकता है ?" गुरु नानक बोले :

पुरुष-स्वर : "अगर लाखों कोस दूर के लोक में पितरों को पानी पहुंच सकता हैं तो मेरे खेत तो बहुत पास हैं। वे क्यों नहीं सींचे जा सकते ?"

[वाद्य-ध्वनि, उपदेश-सूचक]

उद्घोषक : गुरु नानक ने जगह-जगह पर कुरीतियों और अंध-विश्वासों पर कड़ा प्रहार किया। उनके लिए हिन्दू और मुसलमान में कोई अंतर नहीं था। पश्चिम की यात्रा करते हुए वह मक्का पहुंचे। वहां एक काला पत्थर है, जिसे 'कावा-शरीफ' के नाम से पुकारा जाता है और लोग उसमें 'अल्ला का घर' समझकर उसका बड़ा आदर करते हैं। गुरु नानक उसी की ओर टांगें फैलाकर लेट गये। एक मुल्ला ने यह देखा तो उसे बहुत बुरा लगा। उसने चिल्लाकर नानक से कहा :

पुरुष-स्वर : "ओ मुसाफिर, तू कौन है, जो अल्ला के घर की तरफ टांगें फैलाकर पड़ा है ? इतनी बेइज्जती तू कैसे कर रहा है ?"

उद्घोषक : नानक ने कहा :

पुरुष-स्वर : "मेरे भाई, मैं किसी की बेइज्जती नहीं करना चाहता। लेकिन यह तो बताओ कि अल्ला का घर किस तरफ नहीं है ? मैं उसी तरफ अपनी टांगें कर लूंगा।"

उद्घोषक : मुल्ला समझदार था। उनकी बात समझ गया और कोई जवाब न देकर आगे बढ़ गया।

[उद्बोधक वाद्य-ध्वनि]

उद्घोषक : पूर्व की यात्रा करते हुए नानक दिल्ली पहुंचे। वहां का सुलतान साधु-सन्तों से बहुत चिढ़ता था और कई साधुओं को उसने जेल में डाल रखा था। उसने गुरु नानक को भी कैद कर लिया। जेल में नानक ने अपने साथी कैदियों के साथ हंसते-हंसते चक्की चलाई। सुलतान को पता चला तो वह अचंभे में रह गया। आखिर यह कैसा साधु है, जो जेल में स्वयं तो खुश है ही, दूसरों को भी खुश कर रहा है ! सुलतान ने उन्हें छोड़ देने की आज्ञा दे दी। लेकिन नानक ने कहा :

पुरुष-स्वर : "पहले मेरे साथियों को रिहा करो, तब मैं जेल से बाहर जाऊंगा।" सुलतान को सारे कैदियों को छोड़ना पड़ा।

[हर्ष-सूचक वाद्य-ध्वनि]

स्त्री-स्वर : पूर्व की यात्रा करते हुए नानक जगन्नाथ पुरी गये। वहां भी उनके साथ एक घटनी घटी।

मंदिर के पुजारियों ने कहा :

पुरुष-स्वर : "आइये, हमारे साथ जगन्नाथ की आरती करिये।"

स्त्री-स्वर : नानक ने कहा :

पुरुष-स्वर : "जगन्नाथ तो इस सृष्टि के स्वामी हैं। उनकी आरती तो सारा ब्रह्माण्ड कर रहा है। हम अपनी छोटी-सी थाली में दीपकोंवाली आरती से उसे कैसे प्रसन्न कर सकते हैं ?"

स्त्री-स्वर : पुजारियों ने पूछा :

पुरुष-स्वर : "उनकी आरती ब्रह्माण्ड कैसे कर रहा है।"

स्त्री-स्वर : नानक ने उत्तर दिया :

पुरुष-स्वर : "सारा आकाश जगन्नाथ की आरती का थाल है, उसमें चन्द्रमा और सूर्य के दीप जगमगा रहे हैं। लाखों-करोड़ों तारे जड़े हुए मोतियों के समान हैं। शीतल हवा धूप जला रही है। इस आरती से बढ़कर आरती हम क्या कर सकते हैं ?"

[हर्षसूचक, आनंद-वर्द्धक वाद्य-ध्वनि]

उद्घोषक : नानक पंजाब, काश्मीर, कैलास, मानसरोवर और फिर तिब्बत की यात्रा करते हुए पुनः पंजाब आये और रावी के तट पर उन्होंने एक नगर बसाया, जिसका नाम 'करतारपुर' रक्खा। वहीं वह अपने माता-पिता, स्त्री-पुत्र को ले आये और उन्हें वहां छोड़कर स्वयं राजस्थान, महाराष्ट्र होते हुए दक्षिण गये। लंका गये। लंका से ही वह मक्का गये थे।

स्त्री-स्वर : नानक के जीवन का ध्येय ही बन गया था घूम-घूमकर लोगों को उपदेश देना और उनकी भलाई करना।

पुरुष-स्वर : मक्का से उनके और साथी तो लौट आये, नानक कई देशों में घूमते हुए बगदाद पहुंचे।

स्त्री-स्वर : वहां उन्होंने लोगों का ध्यान रोजमर्रा की घिसी-पिटी बातों से हटाकर नई बातों की ओर आकर्षित करने का बड़ा मजेदार तरीका अपनाया।

पुरुष-स्वर : उन्होंने बांग दी। उसका पहला भाग मुसलमानों का था, दूसरा पंजाबी और संस्कृत का।

स्त्री-स्वर : ऐसी बात को सुनकर कुछ लोगों को बड़ा गुस्सा आया। कुछ के मन में यह देखने की जिज्ञासा हुई कि यह आदमी कौन है ! उनके चारों ओर भीड़ इकट्ठी हो गई।

पुरुष-स्वर : फिर क्या था ! नानक ने उन्हें अच्छी-अच्छी बातें समझाईं और सबका मन मोह लिया।

[मधुर वाद्य-ध्वनि]

उद्घोषक : नानक के चरण नहीं रुके। वह काबुल पहुंचे। लोग उन्हें अब 'हिन्द का पीर' कहने लगे थे। काबुल में बाबर ने उनको बुलाया और बड़े आदर से उन्हें शराब पेश की। नानक ने कहा :

पुरुष-स्वर : "हमने तो ऐसी शराब पी रक्खी है, जिसका नशा कभी उतरता ही नहीं है। वह शराब किस काम की, जिसका नशा थोड़ी देर में उतर जाय !"

[वाद्य-ध्वनि]

उद्घोषक : चौथी यात्रा से नानक घर लौट आये। फिर उन्होंने कोई लम्बी यात्रा नहीं की। वैसे जहां

उनकी जरूरत मालूम देती, वहां जाते और लोगों की भलाई के काम करते। एक बार उन्हें मालूम हुआ कि बाबर मारकाट करता हुआ, तबाही मचाता हुआ, भारत आ गया है। साठ साल की अवस्था होते हुए भी नानक अपने साथी मरदाना को साथ लेकर बाबर से मिलने चल दिये। बाबर की फौजों ने उस समय एमनाबाद पर धावा बोल दिया था। उन्होंने हजारों निरपराध लोगों को पकड़-पकड़कर जेल में डाल दिया था। नानक भी पकड़े गये। उन्होंने जेल में अपने प्यार और निडरता से बड़ी शान्ति पैदा कर दी। जब बाबर को यह समाचार मिला तो उसने नानक को बुलवाया। देखते ही वह उन्हें पहचान गया। नानक ने उसे खूब बुरा-भला कहा। बाबर को अपनी करनी पर पछतावा हुआ और उसने सारे कैदियों को छोड़ दिया।

[हर्षसूचक वाद्य-ध्वनि]

स्त्री-स्वर : इसके बाद नानक बहुत कम बाहर निकले। उन्हें लोग श्रद्धा से 'बाबा नानक' कहने लगे। उनका नाम प्रत्येक पंजाबी के हृदय पर अंकित हो गया। दुनिया के लोग उनका दर्शन करने आते। करतारपुर लोगों के लिए एक तीर्थ बन गया।

पुरुष-स्वर : दूर-दूर से लोग उस तीर्थ में आते। सोचते थे कि नानक इतने बड़े संत हैं तो सजे-सजाये बढ़िया सिंहासन पर बैठते होंगे, लेकिन वे देखते कि

उनके बाबा नानक तो खेतों में और लंगर में काम कर रहे हैं।

स्त्री-स्वर : उनके लंगर में छोटे-बड़े का, अमीर-गरीब का, कोई भेद-भाव नहीं था।

पुरुष-स्वर : जात-पांत का कोई बंधन नहीं था। सब बराबर थे।

[प्रेम-सूचक वाद्य-ध्वनि]

उद्घोषक : अब गुरुनानक को लगा कि उनका आखिरी समय निकट आ गया है। अपने शेष काम को पूरा करने के लिए, जो ज्योति उन्होंने जलाई थी, उसे प्रज्वलित रखने के लिए, उन्होंने अपने सच्चे सेवक लहिनाजी को अपनी गद्दी पर बिठा दिया और उनका नाम 'अंगद' रख दिया। इसके बाद वह एक पेड़ के नीचे जाकर बैठ गये और प्रभु के नाम-स्मरण में लीन हो गये।

स्त्री-स्वर : अंगद उनके चरणों में गिर पड़े और फूट-फूटकर रोने लगे। शिष्य-मण्डली, कुटुम्बी जन सब विलाप करने लगे। पर गुरु नानक तो आनंद में मगन थे। उन्होंने शिष्य-मण्डली से 'सोहिला' गाने को कहा।

पुरुष-स्वर : लोग 'सोहिला' गाने लगे। उसके समाप्त होने पर जब जपुजी का अंतिम 'सलोक' कहा गया तो गुरु नानक ने चादर ओढ़ ली और 'वाह गुरुजी' कहते-कहते ब्रह्मलीन हो गये।

[शोकसूचक तीव्र वाद्य-ध्वनि धीमी होकर फिर तीव्र हो और अंत में धीमी ध्वनि की पृष्ठभूमि में]

उद्घोषक : गुरुनानक की भौतिक काया चली गई। काया तो सभी की जाती है, पर उन्होंने जो कुछ किया, वह कभी भुलाया नहीं जा सकता। उन्होंने अनेक पदों की रचना की। उनमें 'जपुजी' का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान है। ग्रंथ साहिब में पहला स्थान 'जपुजी' का ही है। सिख उसके प्रति वही श्रद्धा-भाव रखते हैं, जो हिन्दू गीता के प्रति, बौद्ध 'धम्मपद' के प्रति, मुसलमान 'कुरान' के प्रति और ईसाई 'बाइबिल' के प्रति रखते हैं। उसमें उच्चकोटि का ज्ञान भरा हुआ है। उसमें यह भी बताया गया है कि मनुष्य के जीवन का ध्येय क्या है और उसकी सिद्धि किस प्रकार हो सकती है।

स्त्री-स्वर : उनके दूसरे पद भी ऊंची और गहरी भावना से भरे हुए हैं। उनमें ब्रह्म, माया, नाम, गुरु, आत्म-ज्ञान, मुक्ति, जीवन की नश्वरता आदि-आदि विषयों पर प्रकाश डाला गया है। 'जपुजी' में उच्चकोटि की आध्यात्मिक बातें कही गई हैं।

पुरुष-स्वर : गुरु नानक ने जिस धर्म का उपदेश दिया, वह उस समय की राजनैतिक, धार्मिक, सामाजिक और आर्थिक स्थिति के अनुरूप था। उन्होंने शासकों के अत्याचारों का मुकाबला करने पर जोर दिया, ऊंच-नीच और छोटे-बड़े के भेद-भाव को मिटाने की प्रेरणा दी, पाखण्ड को दूर करने का आह्वान किया।

स्त्री-स्वर : वह कहते थे कि असली चीज तो आत्म-ज्योति है, उसी को देखना चाहिए।

पुरुष-स्वर : उन्होंने स्त्री-जाति को आदर-सम्मान दिलवाया, उनके खोये हुए अधिकार दिलवाये, जीवन के सभी क्षेत्रों में उन्हें पुरुष की बराबरी का दर्जा दिलवाया।

स्त्री-स्वर : गुरु नानक का मानना था कि चरम सत्य परमात्मा है। उसी की ओर उन्होंने लोगों का ध्यान खींचा।

पुरुष-स्वर : उन्होंने अहंकार और द्वैत को दूर करने का मार्ग बताया।

स्त्री-स्वर : उन्होंने कर्म-मार्ग, ज्ञान-मार्ग और योग-मार्ग का निरूपण किया।

पुरुष-स्वर : पर सबसे अधिक बल उन्होंने भक्ति-मार्ग पर दिया। उसके सभी पदों में भक्ति की पावन गंगा प्रवाहित दिखाई देती है।

उद्घोषक : उनका मार्ग प्रेम का मार्ग था, भाई-चारे का मार्ग था, मानवता का मार्ग था। उन्होंने जीवन भर मनुष्य को खरा मनुष्य बनाने का प्रयत्न किया।

[वाद्य-ध्वनि, प्रेम-सूचक]

४ : इसलाम के पैग़म्बर

[वाद्य-ध्वनि : धीमे-धीमे । उसके बंद होते ही]

उद्घोषक : कैसा जमाना था वह ! अरब का अधिकांश भाग विदेशियों के हाथों में था । वहां के निवासियों में झूठे वहमों और बुरे रिवाजों का चलन था । आपसी लड़ाइयां और हत्याएं आए दिन होती थीं । लोगों का जीवन टुकड़े-टुकड़े हो रहा था । उनका आगे जीवित रहना खतरे में था । उन्हें एक ऐसी महान आत्मा की आवश्यकता थी, जो उनके सब बुरे रिवाजों और वहमों के जाल को तोड़कर फेंक सके, उन्हें अंधकार से निकालकर प्रकाश में खड़ा कर सके, उनके लड़ाई-झगड़ों को हमेशा के लिए बंद करके उन्हें एकसूत्र में बांध सके और उन्हें सामने खड़ी मौत से बचाकर उन्नति, भलाई और स्वतंत्रता की ओर ले जा सके ।

[आशा-सूचक वाद्य-ध्वनि, कुछ देर तक]

उद्घोषक : उनकी इच्छा पूर्ण हुई । मक्का शहर के एक बड़े

घराने में २० अप्रैल सन् ५७१ ईस्वी को सूर्योदय के समय मोहम्मद साहब के रूप में एक ऐसी विभूति का आविर्भाव हुआ, जिसने अपने जीवन के प्रकाश से चारों ओर फैले अंधकार को दूर कर दिया और सारी दुनिया को दिखा दिया कि सच्चा धर्म क्या है और वह किस तरह सबकी भलाई कर सकता है।

[आनंद सूचक वाद्य-ध्वनि]

पुरुष-स्वर : मोहम्मद साहब के पिता अब्दुल्ला ने पच्चीस साल की उम्र में आमिना नामक एक युवती के साथ शादी की थी। शादी के दो वर्ष के भीतर ही अब्दुल्ला का देहान्त हो गया। बालक मोहम्मद का जन्म उनके मरने के कुछ दिन बाद हुआ। छः साल की उम्र होते-होते उनकी मां भी चल बसी। मां-बाप का सुख बेचारे बालक को नसीब नहीं हुआ।

[शोकसूचक वाद्य-ध्वनि]

उद्घोषक : मोहम्मद साहब की जिन्दगी के पच्चीस वर्ष व्यापार करने और भांति-भांति के अनुभव प्राप्त करने में व्यतीत हुए। उनकी सच्चाई, ईमानदारी और होशियारी की धाक चारों ओर जम गई। नतीजा यह हुआ कि मक्का के बहुत-से व्यापारी उनकी सहायता से व्यापार करने लगे। इसी बीच उनके शहर के एक धनी व्यापारी की मृत्यु हो गई। उसकी विधवा खादीजा को एक ईमानदार और चतुर व्यक्ति की आवश्यकता हुई। मोहम्मद साहब उसके

सहायक बन गये। उन्होंने शाम, दमिश्क आदि नगरों में व्यापार को फैलाया। उनकी मेहनत और चतुराई से ख़दीजा को बड़ा लाभ हुआ। उसने बाद में मोहम्मद साहब से विवाह कर लिया। दोनों की आयु में बड़ा अंतर था। मोहम्मद साहब पच्चीस के थे, ख़दीजा चालीस की, फिर भी दोनों में ख़ूब प्रेम रहा।

[हर्षसूचक वाद्य-ध्वनि]

स्त्री-स्वर : मोहम्मद साहब की उम्र के लोग उस जमाने में अपना समय शायरी करने अथवा आवारा घूमने में बिताते थे। पर मोहम्मद साहब उन जैसे नहीं थे। उन्हें अपने काम से जैसे ही फुरसत मिलती, वह एकांत में चले जाते और अपना समय चिन्तन में गुजारते।

पुरुष-स्वर : उनका रहन-सहन सादा था, मन संयत था, तन्दुरुस्ती अच्छी थी, दिल मुलायम था और चेहरे पर चमक थी। जो भी उन्हें देखता, देखता ही रह जाता।

स्त्री-स्वर : अपनी सच्चाई और ईमानदारी के लिए वह इतने विख्यात हो गये कि उन्हें 'अल अमीन' कहकर पुकारा जाने लगा। 'अल अमीन' का अर्थ था विश्वसनीय, यानी जिस पर भरोसा किया जा सके। अपने जीवन के अंतिम समय तक उन्हें इसी नाम से संबोधित किया जाता रहा।

[मधुर वाद्य-ध्वनि]

उद्घोषक : उन दिनों मक्का के शासक और प्रजा में खूब

झगड़े होते थे। बाहर से आने वाले लोगों के माल-असबाब और कभी-कभी उनके बच्चे तक लूट लिये जाते थे। कोई अदालत नहीं थी, जहां न्याय के लिए जाया जा सके। मोहम्मद साहब ने एक दल बनाया, जिसका काम मक्का में और आस-पास परदेसियों के जान-माल की रक्षा करना था।

स्त्री-स्वर : अरब में उन दिनों गुलामों का क्रय-विक्रय होता था। एक बार कुछ लोग शाम के दक्षिण से किसी ईसाई कबीले के एक लड़के को, जिसका नाम ज़ैद था, पकड़ कर ले आये और मक्का के बाजार में उसको बेच दिया। खदीजा के एक संबंधी ने उसे खरीदा और उसे दे दिया। ख़दीजा ने उसे मोहम्मद साहब को सौंप दिया। मोहम्मद साहब ने उसे आजाद कर दिया और बड़े प्रेम से अपने पास रक्खा। कुछ दिनों बाद ज़ैद का पिता अपने बेटे का पता लगाकर मक्का आया तो मोहम्मद साहब से मिला। उसने लड़के को अपने साथ ले जाना चाहा; लेकिन लड़का मोहम्मद साहब के व्यवहार से इतना प्रभावित हो गया था कि उसने जाने से इन्कार कर दिया।

[आनंद की द्योतक वाद्य-ध्वनि]

पुरुष-स्वर : अपने देश और देशवासियों की मोहम्मद साहब बराबर सेवा करते रहे। जब वह ३० साल के हुए तो कुस्तुनतुनिया के शासक ने पैसा देकर एक ईसाई अरब के द्वारा मक्का पर अधिकार

कर लेने की चाल चली। मोहम्मद साहब ने मक्का वालों से देश-भक्ति और स्वतंत्रता की अपील की और उनमें वह चेतना उत्पन्न की कि शासक को उस ओर देखने की भी हिम्मत न हुई। असल में मोहम्मद साहब शान्ति के उपासक थे और अपनी सूझ-बूझ से उसके लिए रास्ता निकाल लेते थे।

स्त्री-स्वर : अरब और उसके आस-पास के देशों में आपसी फूट, अंध-विश्वास और विदेशी हुकूमतों के अत्याचार को देखकर मोहम्मद साहब बहुत दुखी होते थे और एकान्त में बैठकर विचार करते कि किस तरह लोगों की जिन्दगी पाक-साफ हो और वे किस तरह दूसरों की भलाई में लगें।

पुरुष-स्वर : उनका एक ईश्वर में आरंभ से ही गहरा विश्वास था। वह उसी की खोज में रोजे रखते, रात-रात भर जागते, सबके भले के लिए दुआएं मांगते और कभी-कभी तो अपने परवरदिगार के सामने बच्चों की तरह फूट-फूटकर रोते।

स्त्री-स्वर : किसी ने ठीक ही कहा है :

पुरुष-स्वर : "जिस प्रकार हीरे धरती के पेट में अंधेरे में हीं पाये जा सकते हैं, उसी प्रकार सच्चाई गहरे चिन्तन द्वारा आत्मा की गहराइयों में ही मिल सकती है।"

उद्घोषक : लम्बे और गहरे चिन्तन के बाद मोहम्मद साहब इस निर्णय पर आये कि सबका मालिक ईश्वर है, सब भाई-भाई हैं, सबको बुरे कामों के बचना

और अच्छे कामों में अपने को लगाना चाहिए। हर आदमी को अपने भले-बुरे कामों का फल भोगना पड़ता है। उनके सामने यह बात भी स्पष्ट हो गई कि अरब के सैकड़ों कबीलों और धर्मों के लोग अलग-अलग देवी-देवताओं को पूजते हैं। उनमें फूट और लड़ाई का यही विशेष कारण है। इस तरह उन्होंने एक परमात्मा की पूजा के द्वारा सबको मिलाकर अरब को एक राष्ट्र बनाने का निश्चय किया।

[हर्षसूचक वाद्य-ध्वनि]

स्त्री-स्वर : जब मोहम्मद साहब चालीस वर्ष के हुए तो वह रमजान के महीने में हिरा की अपनी एकान्त गुफा में बैठे हुए थे। अकस्मात उन्हें आवाज सुनाई दी :

पुरुष-स्वर : "जा, उठ, और अपने रब्ब (ईश्वर) का संदेश दुनिया को सुना।"

[उद्बोधक वाद्य-ध्वनि]

स्त्री-स्वर : पर इससे मोहम्मद साहब का समाधान नहीं हुआ। उनके भीतर की बेचैनी दूर नहीं हुई। वह फिर एकान्त में चिन्तन करते रहे। तभी एक रात को उन्हें फिर सुनाई दिया। कोई जोरों से कह रहा था :

पुरुष-स्वर : "ऐलान कर।"

स्त्री-स्वर : मोहम्मद साहब चौंके। फिर आवाज आई :

पुरुष-स्वर : "ऐलान कर।"

स्त्री-स्वर : तीसरी बार फिर यही आवाज आई। तब मोहम्मद साहब ने घबराकर पूछा :

पुरुष-स्वर : "क्या ऐलान करूं ?"
स्त्री-स्वर : उत्तर मिला :
पुरुष-स्वर : "जिसने प्रेम से, प्रेम का पुतला, आदमी, तैयार किया। ऐलान कर।...तेरा रब्ब बड़ा ही दयावान है। उसने आदमी को कलम के जरिये ज्ञान दिया और आदमी को वे सब बातें सिखाईं, जिन्हें वह नहीं जानता था।"
स्त्री-स्वर : कुरान की वे पांच आयतें थीं, जिनका मोहम्मद साहब को सबसे पहले इलहाम हुआ।
पुरुष-स्वर : यहीं से वह 'पैग़म्बर' कहलाने लगे। पैग़म्बर का अर्थ होता है ईश्वर का पैग़ाम अर्थात् संदेश लाने वाला।
स्त्री-स्वर : मोहम्मद साहब को समय-समय पर अपने भीतर से प्रकाश मिलता रहा।
पुरुष-स्वर : इस प्रकाश से उन्हें अपने देश, अपनी कौम और सारी मानव-जाति की भलाई का रास्ता दिखाई दिया।
स्त्री-स्वर : इसीसे उन्हें अपने ध्येय को फैलाने के लिए भांति-भांति के कष्ट उठाने का साहस मिला।

[मधुर वाद्य-ध्वनि]

पुरुष-स्वर : इतना होने पर भी मोहम्मद साहब को अपने ऊपर भरोसा नहीं हुआ। वह एक चादर ओढ़े चुपचाप पड़े रहते। उन्हें रास्ता साफ-साफ दिखाई नहीं देता था।
स्त्री-स्वर : एक दिन फिर उन्हें आवाज सुनाई दी :
पुरुष-स्वर : "ओ चादर में लिपटे हुए ! उठ और लोगों को

आगाह कर, अपने रब्ब की बड़ाई कर, अपने कपड़ों को साफ कर, मैलेपन से बच, दूसरों की सेवा करने के लिए किसी पर अहसान मत जता और अपने रब्ब के लिए सब्र से काम ले।...

[आशा-सूचक वाद्य-ध्वनि, उसके धीमे पड़ते ही]

उद्घोषक : अब मोहम्मद साहब को अपने ध्येय पर भरोसा हो गया और अपने जीवन के शेष वर्ष इसी ध्येय को पूरा करने में उन्होंने विताये। दुनिया के सारे कामों को छोड़कर अब वह लोगों को ईश्वर का संदेश सुनाने में लग गये। उनके उपदेश की मुख्य बातें थीं :

स्त्री-स्वर : "सब देवी-देवताओं और मूर्त्तियों को छोड़कर केवल एक ईश्वर की पूजा करना;

पुरुष-स्वर : "ऊंच-नीच, जात-पांत आदि के भेदों को छोड़कर सबको भाई-भाई समझना;

स्त्री-स्वर : "जुआ, शराब, चोरी, व्यभिचार, लड़कियों की हत्या आदि बुरे कामों को छोड़ना;

पुरुष-स्वर : "दूसरों की भलाई से नेक कामों में लगना।"

[आनंद-दायक वाद्य-ध्वनि]

उद्घोषक : कहावत है—'घर का जोगी जोगना।' मोहम्मद साहब की बातों का प्रभाव मक्का के निवासियों पर बहुत कम पड़ा। लोग प्रायः उनकी खिल्ली उड़ाते। उन्हें गालियां देते। पागल कहते। असल में बहुत-से लोगों की रोजी-रोटी ३६० देवी-देवताओं की पूजा से चलती थी। यही उनकी मुख्य कमाई थी। उसी में मक्का का

बड़प्पन माना जाता था। मोहम्मद साहब ने इसी पर चोट की थी।

स्त्री-स्वर : जो लोग मोहम्मद साहब की बात सुनते थे और मानते थे, उन्हें शासन की ओर से खूब सताया जाता था। एक हब्शी गुलाम को तो जलती रेत पर लिटाकर एक भारी पत्थर उसके ऊपर रख दिया गया। एक दूसरे आदमी के हाथ-पैर बड़ी बेरहमी से काट दिये गए। उसके बदन के टुकड़े-टुकड़े कर दिये गए। उन्होंने मूर्त्ति पूजने और इसलाम को छोड़ने से इन्कार कर दिया था।

[शोकसूचक वाद्य-ध्वनि]

पुरुष-स्वर : इतना होने पर भी मोहम्मद साहब अपने रास्ते पर चलते रहे। पांच साल में उन्हें अपने मत को मानने वाले कुल जमा सौ-सवा सौ आदमी मिले, उनमें गरीब लोग अधिक थे।

स्त्री-स्वर : शासन की ओर से पैसे के और पद के बहुत-से लालच उन्हें दिये गए, पर उन्होंने सबको ठुकरा दिया। लोगों ने कहा, "आप पैगम्बर हैं, कुछ चमत्कार करके दिखाइये।" मोहम्मद साहब ने उत्तर दिया :

पुरुष-स्वर : "मैं कोई चमत्कार नहीं जानता। मैं नाचीज आदमी हूं। वस, इतना जानता हूं कि मुझे अल्लाह ने भेजा है। मुझसे पहले भी अल्लाह ने रसूल भेजे थे। वे हमारी-तुम्हारी तरह खाते-पीते थे और गलियों में घूमते थे।"

स्त्री-स्वर : मोहम्मद साहव ने अपने जीवन में कोई चमत्कार

करके नहीं दिखाया। केवल यही कहते रहे :

पुरुष-स्वर : "अल्लाह ने मेरे दिल में सच्चाई का उजाला किया है और मैं जो कुछ तुमसे कह रहा हूं, वह उसी का संदेशा है।"

स्त्री-स्वर : वह यह भी कहते :

पुरुष-स्वर : "मेरे पास अल्लाह का न तो कोई ख़जाना है, न कोई करामात है, न मैं फरिश्ता हूं। मैं उसी बात पर चलता हूं, जिसे अल्लाह ने मेरे दिल में बिठा दिया है।"

उद्घोषक : शासन ने इसके बाद उनके एक रिश्तेदार पर दबाव डाला कि वह मोहम्मद साहब को संभालें। रिश्तेदार ने उन्हें समझाया कि इतने लोगों को अपना दुश्मन बनाना ठीक नहीं है। उन्होंने जवाब दिया :

पुरुष-स्वर : "मैं उस अल्लाह की कसम खाकर कहता हूं, जिसके हाथ में मेरी जान है कि अगर मेरे दाहिने हाथ पर सूरज को और बाएं हाथ पर चांद को रख दें तब भी मैं जबतक अल्लाह का हुकुम है, अपने इरादे से नहीं हटूंगा।"

[प्रेरणादायक वाद्य-ध्वनि]

उद्घोषक : मोहम्मद साहब अब पचास वर्ष के हो चुके थे। अपने धर्म का उपदेश करते-करते उन्हें दस साल हो गये थे। इसी बीच उनकी पच्चीस साल की साथिन ख़दीजा चल बसी।

[शोकसूचक वाद्य-ध्वनि]

स्त्री-स्वर : अपनी स्त्री के देहान्त पर मोहम्मद साहब ने दर्द के साथ कहा :

पुरुष-स्वर : "अल्लाह जानता है कि खदीजा से बेहतर और बढ़कर मेहरबान जिन्दगी की मेरी साथिन कभी कोई नहीं हुई। जब मैं गरीब था, उसने मुझे मालदार बनाया, जब लोग मुझे झूठा कहते थे, उसने मुझ पर यकीन किया और जब दुनिया मेरे खिलाफ थी और मुझे तकलीफें पहुंचा रही थी, उस वक्त उसने सच्चाई से मेरा साथ दिया।"

स्त्री-स्वर : खदीजा से मोहम्मद साहब के दो लड़के और चार लड़कियां हुईं। लड़के दोनों ही छोटी उम्र में गुजर गये, लड़कियां मौजूद थीं।

[वाद्य-ध्वनि, उतार-चढ़ाव]

उद्घोषक : मक्का में मोहम्मद साहब का काम अधिक नहीं बढ़ा। अब वह वहां से कोई साठ मील दूर अपने एक साथी को लेकर तायफ नामक शहर में चले गये। वह शहर बुतपरस्ती का गढ़ था। लोगों ने मोहम्मद साहब का भारी विरोध किया। परन्तु फिर भी वह नहीं माने तो उन्हें शहर से निकाल बाहर किया। इसके बाद मोहम्मद साहब यसरब गये और फिर मक्का लौट आये। वहां के शासक को पता लगा तो उसने कुछ लोगों को तैयार किया कि वे मौका देखकर अपने-अपने खंजर मोहम्मद साहव के वदन में भोंक दें। मोहम्मद साहव को इसकी जानकारी दी गई और वह चुपचाप रात को अपने मकान के पीछे के

दरवाजे से निकलकर शहर से तीन-चार मील दूर एक गुफा में जा छिपे। चौथे दिन वह ऊंट पर यसरब के लिए रवाना हो गये, वहां उनकी बड़ी आव-भगत हुई और वहां के लोगों ने अपने शहर का नाम बदल कर 'मदीन तुन्नबी' रख दिया, जिसका मतलब होता था 'नबी नगर।' यही नाम आगे बदलकर 'मदीना' हुआ। इसलाम के इतिहास में यह वही 'हिजरत' है, जिससे मुसलमानों का हिजरी सन आरम्भ होता है। हिजरत का मतलब था—अपना घर छोड़कर दूसरी जगह जाना। उस दिन से मोहम्मद साहब और इसलाम की जिन्दगी में एक नया मोड़ आया।

पुरुष-स्वर : धीरे-धीरे अब मोहम्मद साहब के दिन फिरने लगे। इसलाम को मानने वाले लोगों की संख्या बढ़ने लगी। उनमें दो तरह के लोग थे। एक तो वे, जो मक्का से आये थे। दूसरे वे, जिन्होंने मोहम्मद साहब को मदीना बुलाकर पनाह दी थी। दोनों के बीच गहरा भाईचारा स्थापित हो गया। मदीना और उसके आसपास के बढ़ते हुए देश के लोगों के धर्मों में मोहम्मद साहब ने कभी कोई भेदभाव नहीं किया और सबको अपने-अपने धर्म पर चलते की छूट दी। धर्मों की विविधता होने पर भी उन्होंने सबको 'एक उम्मत' यानी एक राष्ट्र कहकर पुकारा।

स्त्री-स्वर : अब मोहम्मद साहब ने मदीने से बाहर दूर-दूर के कबीलों में समझदार आदमी भेजने शुरू किये।

वह उन्हें समझा देते :

पुरुष-स्वर : "लोगों के साथ नरमी से बर्त्ताव करना, किसी से सख्ती न बरतना, उनके दिलों को खुश रखना, उन्हें बुरा न कहना।"

स्त्री-स्वर : मोहम्मद साहब के धर्म को मानने वाले लोगों की संख्या अब जोरों से बढ़ने लगी। मदीने का राज और उसके यश में भी वृद्धि होने लगी। मक्का के शासक इससे हैरान हुए। वे जानते थे कि मोहम्मद साहब की शक्ति को बढ़ने दिया गया तो एक दिन मक्का का धर्म और धन मिट्टी में मिल जायगा। उन्होंने मोहम्मद साहब और मदीने की ताकत को कुचल देने का निर्णय किया।

पुरुष-स्वर : उन्होंने मदीने पर आक्रमण किया। वहां के लोगों के जान-माल की रक्षा का भार मोहम्मद साहब के कन्धों पर था। उन्होंने उपवास किया, प्रार्थना की और अपने रब्ब से आदेश मांगा। आदेश मिलने पर वह कुछ साथियों को लेकर मक्के से आने वाली फौज को रोकने गये। रास्ते में घमासान लड़ाई हुई। मक्का की फौजें मैदान छोड़कर भाग गईं।

[हर्ष-सूचक वाद्य-ध्वनि]

उद्घोषक : इसके बाद मक्का की ओर से कई बार मदीने पर हमले हुए, लेकिन उन्हें मुंह की खानी पड़ी। मदीने के लोगों में धर्म का जोश और न्याय का बल था। बड़ी कोशिशों के बाद मक्का के शासकों से समझौता हो गया। मोहम्मद साहब

मक्का गये। वहां के लोग उनके व्यवहार को देखकर दंग रह गये। प्रेम ने लोगों के दिल बदल दिये। अरब में यहूदी भी बड़ी तादाद में थे। उनका मुख्य केन्द्र मदीने से लगभग सौ मील की दूरी पर खैबर शहर में था। वे लोग इसलाम के प्रति शत्रुता का भाव रखते थे। वे मदीने पर हमला करने के इरादे से उसके आसपास इकठ्ठे हो गये। मोहम्मद साहब ने अपने आदमियों को साथ लेकर उनका मुकाबला किया। उनके सारे किले मुसलमानों के हाथ में आ गये। आपस में सुलह हो गई।

स्त्री-स्वर : जिस समय मोहम्मद साहब खैबर के किले में थे, एक यहूदी स्त्री ने उनके साथियों के भोजन में विष मिला दिया। उनका एक साथी तो तत्काल मर गया, मोहम्मद साहब बच गये, लेकिन उनके अंदर जो विष चला गया, उसके कारण उन्हें जीवन भर कष्ट भोगना पड़ा। उन्होंने उस स्त्री को क्षमा कर दिया।

पुरुष-स्वर : इसी प्रकार उन्होंने रोम के शासकों को अपने अधीन किया। धीरे-धीरे मक्का पर भी उन्होंने विजय प्राप्त कर ली। वहां सारे बुत पूजा के स्थानों से हटा दिये गए।

पुरुष-स्वर : इस प्रकार उत्तर से दक्षिण तक और शाम से हिन्द महासागर तक मोहम्मद साहब का राज फैल गया।

[हर्ष-सूचक ध्वनि]

उद्घोषक : मोहम्मद साहब अब ६३ वर्ष के हो गये थे।

उनका जीवन बड़ा कठोर रहा था। मक्के के कष्ट, अपमान, कैद, शहर से निर्वासन, लड़ाइयां आदि ने उनकी तन्दुरुस्ती पर गहरा असर डाला था। वह बहुत दुर्बल हो गये। खदीजा के मरने के बाद उन्होंने आयशा से दूसरी शादी की थी। आखिरी वक्त में उन्होंने आयशा से कहा :

पुरुष-स्वर : "तुमने जो कुछ अपने पास बचा रक्खा है, उसे गरीबों को बांट दो।"

स्त्री-स्वर : आयशा ने वक्त जरूरत के लिए छः दीनार बचाकर रख छोड़े थे। वे उसने उनके हाथ पर लाकर रख दिये। मोहम्मद साहब ने उन्हें गरीबों में बंटवा दिया। बोले :

पुरुष-स्वर : "सचमुच, यह अच्छा नहीं था कि मैं अपने अल्लाह से मिलने जाऊं और यह सोना मेरी मिल्कियत रहे।"

[वाद्य ध्वनि, मधुर, प्रेरक]

उद्घोषक : जून सन् ६३२ ईस्वी को दोपहर के कुछ देर बाद मोहम्मद साहब की जीवन-लीला समाप्त हो गई।

[शोक-सूचक वाद्य-ध्वनि]

उद्घोषक : कैसी जिन्दगी थी उनकी ! अपने घर में वह अक्सर अपने हाथ से भाड़ू लगाते थे, अपने हाथ से अपने कपड़ों में पैबंद लगाते थे, अपनी बकरियों को आप दोहते थे, अपने हाथ से अपनी चप्पल गांठते थे, खुद अपने ऊंट का खरहरा करते थे, खजूर की चटाई या नंगी जमीन पर सोते थे। आखिरी वीमारी के दिनों में उनकी पीठ पर वोरी के निशान देखकर किसी ने कहा

कि आपके लिए गद्दा बिछा दिया जाय ? उन्होंने जवाब दिया :

पुरुष-स्वर : "मैं आराम करने के लिए पैदा नहीं हुआ हूं।"

स्त्री-स्वर : हालत यह थी कि कोई मेहमान आ जाता तो प्रेम से उसे खाना खिला देते और खुद भूखे रह जाते। उनके रहने का मकान कच्ची ईंटों का था।

उद्घोषक : उनके उपदेश बड़े ऊंचे थे। वह कहते थे—"एक ईश्वर को मानो, उसी की पूजा करो, नेक काम करो, बुरे कामों से बचो, सब धर्मों का सार एक है, उनके चलाने वालों का आदर करो।" किसी ने उनसे पूछा, "इसलाम क्या है ?" उन्होंने उत्तर दिया :

पुरुष-स्वर : "जबान को पाक रखना और मेहमान की खातिर करना।"

स्त्री-स्वर : किसी ने पूछा "ईमान क्या है ?" उनका उत्तर था :

पुरुष-स्वर : "सब्र करना और दूसरों की भलाई करना।"

स्त्री-स्वर : किसी ने पूछा : "इसलाम की सबसे बड़ी पहचान क्या है ?" उन्होंने कहा :

पुरुष-स्वर : "भूखों को भोजन देना और जिन्हें जानते हैं और जिन्हें नहीं जानते, सबको सलाम करना।"

स्त्री-स्वर : किसी ने पूछा : "सबसे बड़ा गुनाह क्या है ?" उनका जवाब था :

पुरुष-स्वर : "किसी भी नशे की चीज़ का इस्तेमाल करना।"

स्त्री-स्वर : किसी ने पूछा : "नरक से कौन बच सकता है?" उन्होंने कहा :

पुरुष-स्वर : "वह जो शान्त है, नेक चलन है और दूसरों के सुख में सुखी और दुःख में दुःखी है।"

स्त्री-स्वर : किसी ने जिज्ञासा की : "पापों की जड़ क्या है ?" उन्होंने कहा :

पुरुष-स्वर : "इस दुनिया से मोह रखना।"

उद्घोषक : वह प्रार्थना किया करते थे, "हे अल्लाह ! मेरे दिल को पाक कर, उसमें कपट न रहे। मेरे कामों को पाक कर, उनमें दिखावा न हो। मेरी जबान को पाक कर, वह कभी झूठ न बोले। मेरी आंखों को पाक कर, उनमें छल न हो।"

[प्रेरक-वाद्य ध्वनि; उतार-चढ़ाव, मंद पड़ने पर]

"हे अल्लाह ! पाक कर, पाक कर।" •

५. बहुजन सुखाय

[वाद्य-ध्वनि : उसकी पृष्ठभूमि में]

सस्वर पाठ : **जगपावनी, मन भावनी, गौतम वरवाणी,**
पाप नाशवानी, मोक्ष प्रदायिनी, कल्याणी।
शान्ति सिखावनी, साम्य सुझावनी सब प्राणी,
विश्व विहारिणी, विघ्न विदारिणी जनवाणी।

उद्घोषक : भगवान् बुद्ध का स्मरण होते ही एक ऐसे महापुरुष का मनोहर चित्र सामने आ जाता है, जिसका जीवन दया, करुणा, मैत्री, प्रेम, बन्धुत्व, अहिंसा, समता तथा समदृष्टि से परिपूर्ण था। क्या धनी और क्या निर्धन, क्या मूर्ख और क्या विद्वान, सबके लिए उनके हृदय का द्वार खुला था। उनके लिए मनुष्य मनुष्य के बीच किसी प्रकार का भेदभाव नहीं था।

पुरुष-स्वर १ : आज भारत में बौद्ध धर्मावलम्बियों की संख्या सीमित है, फिर भी सारा भारत भगवान् बुद्ध तथा उनके धर्मतत्त्वों के प्रति अपनी भावपूर्ण श्रद्धांजलि अर्पित करता है। भगवान् बुद्ध

ने भारत में अनेक मत-मतान्तरों के होते हुए भी पारस्परिक स्नेह और सहयोग से रहने का महान् मंत्र दिया था।

पुरुष-स्वर २ : भगवान् बुद्ध के लगभग ढाई हजार वर्ष बाद सर्वधर्म-समभाव के महान् सिद्धान्त के द्वारा महात्मा गांधी ने भी इसी बात पर जोर दिया। उन्होंने कहा कि कोई भी व्यक्ति किसी भी धर्म का अनुयायी रह सकता है, लेकिन वह इस बात के लिए स्वतंत्र है कि जो भी धर्म उसे रुचिकर हो, उसके सिद्धान्तों के अनुसार वह अपना जीवन ढाले।

उद्घोषक : महान् वृक्षों के बीज एक दिन में नहीं उग आते। शुभ संकल्पों और प्रयत्नों का परिणाम दीर्घ-काल के बाद दिखायी देता है। महापुरुषों के जीवन के सम्बन्ध में भी यही बात है। वे अपनी पैनी निगाह से बहुत दूर का भविष्य देख लेते हैं और एक महान् द्रष्टा के रूप में उन तत्त्वों के बीज भूमि में डाल देते हैं, भले ही उनके जमने में कभी-कभी सैकड़ों और हजारों वर्ष ही क्यों न लग जायं।

पुरुष-स्वर १ : अपने जमाने के लोगों की निगाह में अनेक महापुरुष अपने जीवनकाल में कुछ भी नहीं कर पाये। लोगों को यह भी लगा कि उनके सिद्धान्त व्यर्थ गये, लेकिन लोग यह भूल गये कि इस संसार में जो स्थूल आंखों से दिखायी देता है, वही सबकुछ नहीं है। उसके अतिरिक्त भी कुछ है, जो अदृश्य है और जिसकी

महिमा सहस्रों वर्ष बाद दुनिया को मालूम होती है।

स्त्री-स्वर १ : भगवान् बुद्ध ने जब सब धर्मों की एकता और सहिष्णुता की बात कही थी तो लोगों ने उनका मजाक उड़ाया था। लेकिन ढाई हजार वर्ष बाद उसी सिद्धांत के अनुसार हमारे देश में आवाज ऊंची हो रही है। कितने धर्म हैं भारत में, लेकिन उनके अनुयायी यह अपेक्षा नहीं रखते कि कोई दूसरा अपने धर्म को छोड़ दे और उनके धर्म का अनुयायी बन जाय। इस धार्मिक सहिष्णुता का बीज भगवान् बुद्ध ने ही तो बोया था।

पुरुष-स्वर १ : यही बात जातिभेद के सम्बन्ध में है। भगवान् बुद्ध ने अपने धर्म में जातिभेद को तनिक भी स्थान नहीं दिया। उन्होंने कहा, "पशु-पक्षियों में आकार-प्रकारादि से लेकर विभिन्न जातियां होती हैं, मगर मनुष्यों में वैसी जातियां नहीं होतीं। सभी मनुष्यों के सारे अवयव लगभग एक जैसे ही होते हैं। इसलिए मनुष्यों में जाति-भेद निश्चित नहीं किया जा सकता।

स्त्री-स्वर २ : उन्होंने यह भी कहा :

पुरुष-स्वर १ : "हां, कर्मों पर से मनुष्य की जाति का निर्णय किया जा सकता है। कोई ब्राह्मण गायें पालकर जीवन-निर्वाह करता हो तो उसे ग्वाला कहना चाहिए, न कि ब्राह्मण; जो शिल्पकला से जीविका चलाता हो, वह कारीगर है; जो वाणिज्य करता हो, वह वणिक् है; दूत का काम करनेवाला दूत, चोरी से पेट भरने वाला चोर।

युद्धकला से जीविका चलानेवाला योद्धा, यज्ञ-यागों पर जीवन बितानेवाला याजक और राष्ट्र पर जीविका चलानेवाला राजा है। इनमें से किसी को भी ब्राह्मण नहीं कहा जा सकता।"

उद्घोषक : लेकिन उनकी ये बातें नहीं सुनी गयीं। परिणाम यह हुआ कि हमें एक हजार बरस तक दूसरों की गुलामी भुगतनी पड़ी। आज जातिवाद के दोष को हम भली प्रकार समझने लगे हैं और उसकी जड़ को निर्मूल करने के लिए प्रयत्नशील हैं। इस तरह भगवान् बुद्ध के एक महान् सिद्धान्त की सच्चाई आज हमारे सामने प्रकट हो रही है।

पुरुष-स्वर १ : भगवान् बुद्ध ने ऐसी बातें दुनिया के सामने रखीं, जिन पर चलकर 'वसुधैव कुटुम्बकम्' का सिद्धान्त चरितार्थ होता है। उन्होंने सच्ची शान्ति स्थापित करने पर बार-बार जोर दिया। उन्होंने कहा, "वैर से वैर शान्त नहीं होता।"

गूंज : **यह नियम सनातन, एक वैर,**
करता न दूसरे का अभाव,
निर्वैर भावना से जग में,
होता सब शान्त विरोधभाव।

स्त्री-स्वर १ : उन्होंने यह भी कहा कि अक्रोध से क्रोध को जीते, भलाई से बुराई को जीते, कृपण को दान से जीते और झूठ बोलनेवाले को सत्य से जीते। क्षमा के समान इस जगत् में दूसरा तप नहीं है।

पुरुष-स्वर १ : इतने वर्ष बाद आज भी हमें यही स्वर सुनायी

प्रसाद मिला। उनकी सेवा पाकर जाने कितनों ने स्वयं को धन्य माना और जाने कितनों के जीवन को उन्होंने कषायों से मुक्त करके स्वच्छ और निर्मल बनाया। उनके सिद्धान्तों की उत्कृष्टता के कारण ही सम्राट् अशोक उनका अनुयायी बना और उसने उनके धर्म को चारों ओर प्रसारित करने के लिए महान् प्रयत्न किया।

पुरुष-स्वर १ : आज उनका स्मरण हमारे लिए इस कारण और भी आवश्यक हो गया है कि भारत की आन्तरिक तथा अन्तर्राष्ट्रीय नीति भगवान् बुद्ध के सिद्धान्तों का अनुसरण कर रही है।

स्त्री-स्वर १ : तभी तो भारत सरकार की राज-मुद्रा और राष्ट्र-ध्वज पर सम्राट् अशोक के धर्म-चक्र को स्थान दिया गया है।

उद्घोषक : भगवान् बुद्ध के जीवन की अनेक घटनाएं स्मरणीय हैं। लुम्बिनी वन में शालवृक्ष के नीचे उनका जन्म, भरी जवानी में राजपाट और परिवार का त्याग तथा कई वर्ष तक कठोर साधना—ये सब घटनाएं अपना महत्त्व रखती हैं, लेकिन सबसे अधिक महत्त्व है बैशाख की पूर्णिमा का, जिस दिन उन्हें बोध प्राप्त हुआ था।

स्त्री-स्वर १ : वह दिन निस्सन्देह भारत के लिए ही नहीं, संसार के लिए एक महोत्सव का दिन था और आज भी है।

स्त्री-स्वर २ : भगवान् बुद्ध को सम्बोधि-प्राप्ति का अर्थ था उन महान् तत्वों की चरमसिद्धि, जिनके लिए

वह न केवल राजपाट त्यागकर अकिंचन बने थे, अपितु कठोर साधना के द्वारा उन्होंने अपने को विश्व के दुःख-दर्द के साथ मिला दिया था।

स्त्री-स्वर १ : वे जानते थे कि इस संसार में सुखी कम हैं, दुःखी अधिक हैं, समृद्धों की संख्या कम है, अभावग्रस्त अधिक हैं। इसलिए उन्होंने जिस स्वर को ऊंचा किया, वह था 'बहुजन हिताय, बहुजन सुखाय।'

स्त्री-स्वर २ : गांधीजी के सर्वोदय की बुनियाद भी उसी की नींव पर रखी गयी। विगत अनुभवों के आधार पर युग आगे बढ़ता गया है। बुद्ध ने 'बहुजन' को लिया तो गांधीजी की परिधि में सबका उदय आ गया, 'सर्वजन' आ गया।

पुरुष-स्वर १ : बुद्ध ने कहा : "मनुष्य स्वयं ही अपना स्वामी है। अपने को जिसने भलीभांति जीत लिया, वही दुर्लभ स्वामित्व प्राप्त कर सकता है।"

गूंज : **संग्राम-भूमि में जय पाता—**
कोई कर लाखों को सभीत।
पर सत्य समर-विजयी है वह,
जो स्वयं आपको चुका जीत।

स्त्री-स्वर १ : उन्होंने यह भी कहा : "जो प्राणियों की हिंसा करता है, जो झूठ बोलता है, जो किसी की न दी हुई चीज को उठा लेता है, यानी चोरी करता है, जो शराब पीता है, वह दुनिया में अपनी जड़ आप खोदता है।"

पुरुष-स्वर १ : ऐसा प्रतीत होता है, मानो महात्मा गांधी ही

अहिंसा, सत्य, अस्तेय तथा निर्व्यसन के महाव्रतों का उपदेश दे रहे हों।

उद्घोषक : जीवन के कुछ शाश्वत सत्य होते हैं। उनकी उपयोगिता सार्वदेशिक और सार्वकालिक होती है। भगवान् बुद्ध के अनेक धर्मतत्त्व ऐसे ही थे। जिस युग में वह अवतीर्ण हुए, वह युग बड़ी उथल-पुथल का था, पर उन्हें जो सच लगा, वह कहा और वैसा ही किया। कुछ लोगों का ध्यान उनकी ओर गया, लेकिन उन लोगों की संख्या बहुत थोड़ी थी। बीच में फिर वह समय आया, जबकि उन सिद्धान्तों की अवहेलना हुई और उसका दुष्परिणाम लम्बे अरसे तक भोगना पड़ा। आज पुनः वह मंगल-बेला आयी है, जबकि देश-विदेश के लोग उस ओर आशाभरी निगाह से देखते हैं।

स्त्री-स्वर १ : और वे अपने निजी, सामाजिक, राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय जीवन में उन सिद्धान्तों की कल्याणकारिता को स्वीकार करते हैं।

उदघोषक : भारत-भूमि निस्सन्देह धन्य है कि उसने बद्ध, महावीर और गांधी जैसे महापुरुषों को जन्म दिया। ये सब दूसरों के लिए जिये और दूसरों की सेवा में ही उन्होंने अपने जीवन के प्रत्येक श्वास का सद्व्यय किया।

पुरुष-स्वर १ : भगवान् बुद्ध ने अपने भिक्षुओं को आदेश देते हुए कहा था : "हे भिक्षुओ! लोक के हित के लिए, लोक के सुख के लिए, लोक पर दया करने के लिए, देवताओं और मनुष्यों के

प्रयोजन के लिए, हित के लिए, सुख के लिए, विचरण करो।"

उद्घोषक : इस प्रकार बुद्ध भगवान् ने प्रेम, दया, करुणा, लोक-कल्याण आदि की ऐसी सरिता प्रवाहित की कि संसार का प्रत्येक प्राणी उसमें डुबकी लगाकर अपने को पावन बना सके। जीवन वही सार्थक है, जो दूसरों के काम आता है और वही व्यक्ति धन्य है, जिसके जीवन का हर क्षण लोक-हित में व्यतीत होता है।

पुरुष-स्वर १ : भगवान् बुद्ध के चरणों में आज हमारी श्रद्धा इसीलिए नत हो जाती है कि उन्होंने संसार को सुख और शान्ति का मार्ग दिखाया और दीन-दुखियों तथा पददलितों को आशा का संदेश दिया।

स्त्री-स्वर १ : एक बार एक मनुष्य कहीं पड़ा था। बड़ा व्याकुल था। बुद्ध का शिष्य उधर से निकला। शिष्य ने बुद्ध का उपदेश सुनाया, लेकिन उसने नहीं सुना। शिष्य ने आकर बुद्ध से कहा। बुद्ध उस शिष्य को लेकर अगले दिन वहां गये। उसे भूखा देखकर भोजन मंगवाया और सबसे पहले उसे भोजन करवाया। शिष्य ने पूछा, "भन्ते, आपने उपदेश नहीं दिया।" बुद्ध ने कहा, "भोजन ही आज इसका उपदेश था।"

पुरुष स्वर २ : **"आत्मनः प्रतिकूलानि परेषां न समाचरेत्"**—यह ऋषि-वचन है। जिस आचरण से तुम समझते हो कि तुम्हें दुःख पहुंचेगा, उसका प्रयोग दूसरों के प्रति मत करो।

स्त्री-स्वर १ : भगवान् बुद्ध ने भी यही कहा है कि वही वात बोलो, जिससे अपने को दुःख न हो और दूसरे किसी को दुःख न पहुंचे।

पुरुष-स्वर १ : भगवान् बुद्ध ने कहा, "वड़ा मनुष्य कौन है? हंस, क्रौंच, मोर, हाथी, मृग—ये सभी पशु-पक्षी सिंह से भय खाते हैं। कौन शरीर में बड़ा है और कौन शरीर में छोटा, यह तुलना करना व्यर्थ है। इसी प्रकार ममुष्यों में बौने शरीर का होते हुए भी यदि कोई प्रज्ञावान् है, तो वही वास्तव में वड़ा है। भारी-भरकम शरीर के होते हुए भी हम मूर्ख मनुष्य को बड़ा नहीं कह सकते।"

स्त्री-स्वर १ : उन्होंने यह भी कहा कि श्रद्धावान्, शीलवान्, यशस्वी पुरुष जिस देश में जाता है, वहीं वह पूजित होता है।

उद्घोषक : जीवन को उन्नत बनाने के लिए कोई भी ऐसा विषय नहीं है, जिस पर भगवान् बुद्ध के अमृत-वचन उपलब्ध न हों।

स्त्री-स्वर २ : छोटों के लिए कितना प्रेम था उनमें।

पुरुष-स्वर १ : भगवान् राम ने शबरी के बेर खाये थे। भगवान् बुद्ध ने भी गणिका अम्बपाली के यहां भोजन किया। उन्होंने अपने आचरण से बता दिया कि महापुरुषों के लिए सारे मानव एक समान होते हैं। न कोई नीचा, न कोई ऊंचा, न कोई वड़ा, न कोई छोटा।

पुरुष-स्वर २ : भगवान् बुद्ध के अन्तिम शब्द कितने लोक-हित-कारी थे, "संसार की सब वस्तुएं विनष्ट हो

जानेवाली हैं। बिना आलस किये जीवन के लक्ष्य को पूरा करो।"

उद्घोषक : ऐसे महापुरुष के सिद्धान्तों को स्मरण करना, उनके प्रति श्रद्धांजलि अर्पित करना, लोक-जीवन में ऐसा शीतल स्रोत प्रवाहित करना है, जो सबके लिए मंगलकारी है और जो युग-धर्म के अनुकूल है।

गूंज : हे महाबोधि, हे महाप्राण,
तुमको है अभिनन्दन महान्।
हे ज्ञान-पुञ्ज की अमर ज्योति
तुमने जग का उद्धार किया,
ले सत्य, अहिंसा व्रत निर्मल
फिर धरती पर अवतार लिया।
व्याकुल मानवता शान्त हुई,
पा बौद्धधर्म दिव्यावदान।
हे महाबोधि, हे महाप्राण,
तुमको है अभिनन्दन महान्।

[वाद्य-ध्वनि] ●

६ : प्रेम के पुजारी

[वाद्य-ध्वनि, उसी के साथ समवेत स्वर में]

रघुपति राघव राजाराम, पतित पावन सीताराम।
ईश्वर अल्ला तेरे नाम, सबको सन्मति दे भगवान।

उद्घोषक : "ईश्वर अल्ला तेरे नाम" (कुछ रुककर) "सबको सन्मति दे भगवान"—रामधुन के ये स्वर राष्ट्रपिता महात्मा गांधी को कितने प्रिय थे! इन्हीं स्वरों से उनकी पुनीत प्रार्थना-स्थली नित्य गूंजा करती थी। सैकड़ों नर-नारी भावना-विभोर होकर इन स्वरों में अपने स्वर मिलाते हुए गाते थे :

समवेत-स्वर : "रघुपति राघव राजाराम।"

पुरुष-स्वर : राष्ट्रपिता बापू! उनके स्मरण से हमारे इतिहास के कितने पृष्ठ आंखों के सामने खुल जाते हैं—वे पृष्ठ, जिस पर अगणित लोगों के सुख-दुःख की कहानियां लिखी हैं, जिनमें कितनों की आशा-निराशा छिपी है। इन्हीं पन्नों पर अंकित है एक महान् राष्ट्र के करवट लेने, आंखें खोलकर उठ खड़े होने तथा विदेशी

सत्ता की दासता की बेड़ियों को तोड़ने और स्वतंत्र होने की रोमांचकारी गाथाएं। वे जनमे काठियावाड़ में, लेकिन उनका हृदय इतना विशाल था कि उसने कोई भी संकीर्ण सीमा स्वीकार न की।

स्त्री-स्वर : ये सबके और सब उनके हो गये।

पुरुष-स्वर : समूचा भारत उनका कार्यक्षेत्र बना और यहां के कोटि-कोटि नर-नारियों का सुख-दुःख उनका अपना सुख-दुःख हो गया।

स्त्री-स्वर : उनका प्रेम जात-पांत, धर्म अथवा देश का भेद नहीं जानता था। कहीं से भी कराह उठती कि उनका हृदय व्यथित हो जाता था।

पुरुष-स्वर : उनके दिल में किसी के प्रति भी घृणा या विद्वेष न था। इस भूमि से विदेशी सत्ता को हटाने के लिए जोरों का प्रयत्न करते हुए भी वह कहा करते थे कि अंग्रेजों के प्रति हमारा तनिक भी दुर्भाव नहीं है। हम तो अंग्रेजी शासन को यहां से हटाना चाहते हैं।

स्त्री-स्वर : उनके इस असीम अनुराग के कारण ही तो सबके हृदय में उनके लिए गहरी आत्मीयता थी। सारी दुनिया में उनका नाम और उनका प्यार पहुंचा था और अन्य देशों के असंख्य व्यक्ति अनुभव करते थे कि गांधी भारत के ही नहीं, उनके अपने भी हैं।

उद्घोषक : ऐसे थे राष्ट्रपिता, तभी तो ३० जनवरी को उनके महाप्रयाण के समाचार से सारा संसार सिसक उठा था। जिन्होंने उन्हें देखा था, उनकी

आंखों से तो आंसुओं की धारा उमड़ी ही, जिन्होंने उन्हें नहीं देखा था, उन्हें भी लगा कि उनका कोई आत्मीय जन चला गया।

[वेदनासूचक वाद्य-ध्वनि, किसी स्त्री के सिसकने का स्वर]

बालक : मां, क्या हुआ ! तुम रोती क्यों हो ?

स्त्री : (रोते हुए) क्या कहूं बेटा, कुछ कहते नहीं बनता।

बालक : फिर भी कुछ तो कहो।

स्त्री : (गहरी वेदना के साथ) अभी रेडियो पर खबर आयी है कि किसी ने गांधी को गोली मार दी।

बालक : (आश्चर्यचकित होकर) : गोली मार दी ! गांधी के ? नहीं मां, ऐसा नहीं हो सकता !

स्त्री : बेटा, इस दुनिया में कभी-कभी अनहोनी बात हो जाया करती हैं। यह भी एक ऐसी ही बात है। (लम्बी सांस लेकर) गांधी चले गये !

[फिर दुःखसूचक वाद्य-ध्वनि]

बालक : (रुंधे गले से) मां, अगर इस दुनिया में बन्दूक न बनी होतीं तो कितना अच्छा होता ?

उद्घोषक : ये थे दूर देश के एक मां-बेटे के उद्गार, जिन्होंने गांधीजी को कभी देखा तक न था। ऐसे एक नहीं, अनगिनत परिवार शोक-संतप्त हो उठे। एक विदेशी राजनेता की भावनाएं इन शब्दों में फूट पड़ीं :

विदेशी स्वर : "मैंने गांधी को कभी नहीं देखा, मैं उनकी भाषा नहीं जानता, मैंने उनके देश में कभी पैर नहीं रखा, परन्तु फिर भी मुझे इतना दुःख हो रहा है, जैसे मैंने कोई अपना और प्यारा खो दिया हो।

इस आसाधारण मनुष्य की मृत्यु से सारा संसार शोक में डूब गया है।"

उद्घोषक : उनकी बात ठीक थी। आधुनिक इतिहास में किसी भी व्यक्ति के निधन पर इतना गहरा और इतना व्यापक शोक आजतक नहीं मनाया गया। दुनियाभर के झंडे झुक गये, मानवता ने भी विह्वल होकर अपनी ध्वजा नीची कर दी। वह उसकी आत्मा के प्रवक्ता थे न?

[विदनासूचक वाद्य-ध्वनि]

गूंज : जिनके पावन पुण्य स्मरण में, मुखर हो रही भारती।
हीरे-पन्नों की थाली में, धूप-दीप की आरती।।
जिनके शुभ आदर्श राष्ट्र को लिये जा रहे लक्ष्य पर।
जिनकी शुचि पद धूल जिन्दगी को उस पार उतारती।।
छिपा विराट ज्वलन्त सृजन था उनके उस बलिदान में।
आजादी का दीप जलाया जिसने उस तूफान में।।

उद्घोषक : लेकिन बापू के प्रेम का साम्राज्य सहज ही दुनिया में नहीं फैल गया। इसके लिए उन्होंने जीवनभर तपस्या की। न्याय और सत्य के लिए वे निरन्तर संघर्ष करते रहे, अन्याय के विरुद्ध अविचल भाव से जूझते रहे। पढ़-लिखकर वे बैरिस्टर बने, लेकिन भाग्य ने उनके लिए कुछ और ही लिख रखा था। बैरिस्टर होने के कुछ ही समय बाद एक मुकदमे में दक्षिण अफ्रीका गये। मुकदमे का तो पंच-फैसला हो गया, लेकिन साथ ही उनके जीवन की धारा नयी दिशा में मुड़ गयी। दक्षिण अफ्रीका में बहुत-

से भारतीय रहते थे, पर उन पर कड़े बन्धन थे और वे मानवीय अधिकारों से वंचित थे। गांधीजी ने उन अधिकारों को प्राप्त करने के लिए सबसे पहली लड़ाई वहीं लड़ी।

पुरुष-स्वर : वह अपने ढंग की अनोखी लड़ाई थी। 'सत्याग्रह' का वहीं आविष्कार हुआ। हजारों स्त्री-पुरुष जेल गये।

स्त्री-स्वर : स्वयं गांधीजी ने पहले-पहल वहीं पर जेलयात्रा की और अधिकारियों के अन्याय का डटकर मुकाबला किया।

पुरुष-स्वर : सत्याग्रह की वह लड़ाई कई वर्ष तक चली। सरकार हैरान हो गयी और अन्त में उसे भारतीयों को उनके मानवोचित अधिकार देने के लिए बाध्य होना पड़ा।

[हर्ष सूचक वाद्य-ध्वनि]

उद्घोषक : यदि यह संग्राम न किया गया होता और गांधीजी तथा उनके नेतृत्व में भारतीयों ने दृढ़तापूर्वक अत्याचारों का अहिंसक रूप से सामना न किया होता, तो आज दक्षिण अफ्रीका में भारतीयों के लिए कोई स्थान न रहा होता। इतना ही नहीं, दक्षिण अफीका में भारतीयों की विजय से अन्य ब्रिटिश उपनिवेशों के भारतीय भी वहुत कुछ अंशों में वचे रहे। उससे भी वड़ी वात यह हुई कि सत्याग्रह की महत्ता सिद्ध हुई और वहां जो प्रयोग किये गए। वे भारत में आगे चलकर होनेवाले संघर्ष की आधार-शिला वने। गांधीजी की विजय के समाचार ने भारत में एक

नयी चेतना उत्पन्न कर दी। सन् १९१५ में जब गांधीजी स्वदेश लौटे तो बड़ी उमंग के साथ देशवासियों ने उनका स्वागत किया।

पुरुष-स्वर : किन्तु घर आकर वे चैन से नहीं बैठ गये। एक के बाद एक अनेक समस्याएं उनके सामने आती गयीं। सच बात यह है कि वे किसी भी अन्याय और अत्याचार के आगे झुकना नहीं जानते थे और अपने देशवासियों से भी वह ऐसी ही अपेक्षा रखते थे।

स्त्री-स्वर : पर वह जमाना ही कुछ और था। भारत में विदेशी शासन था, जिसके दबाव के नीचे भारतीयों की चेतना लुप्त हो गयी थी। गांधीजी ने उनमें नये प्राण फूंके।

[आशा सूचक वाद्य-ध्वनि]

पुरुष-स्वर : भारत में आते ही वीरमगाम की ज़कात का मसला सामने आया। गांधीजी ने सलाह दी कि इस मामले में सत्याग्रह करने के लिए तैयार रहा जाय। सरकार को इसकी खबर मिली। सत्याग्रह की संभावना से उसने झट चुंगी रद्द कर दी।

स्वर-स्त्री : बाद में चम्पारन के निलहे गोरों के अत्याचारों का उन्होंने प्रतिकार किया। सदियों की बुराई छह महीने के संघर्ष से दूर हो गयी।

पुरुष-स्वर : अहमदाबाद के मिल-मजदूरों की लड़ाई के इतिहास को कौन नहीं जानता? खेड़ा के सत्याग्रह को कौन भूल सकता है?

स्त्री-स्वर : फिर रौलट-कानून के विरुद्ध देशभर में प्रदर्शन

हुए, जलियांवाला बाग का हत्या काण्ड और अमृतसर की ऐतिहासिक कांग्रेस हमारे इतिहास की कभी न भूलनेवाली घटनाएं हैं।

पुरुष-स्वर : लेकिन उनके असहयोग आन्दोलन ने तो देश में तूफान खड़ा कर दिया।

[प्रखर वाद्य-स्वर]

पिता : क्यों रे रामू, तू कॉलेज क्यों नहीं जाता ?

बालक : नहीं पिताजी, मैं कॉलेज हर्गिज नहीं जाऊंगा। सारे लड़कों ने तय कर लिया है कि वे गांधीजी की बात मानेंगे और कोई भी पढ़ने नहीं जायगा।

पिता : अरे, पढ़ाई का नुकसान होगा सो।

बालक : लेकिन देश की आजादी उससे भी ज्यादा कीमती है।

[वाद्य-स्वर]

मुवक्किल : वकील साहब, ओ वकील साहब, जल्दी तैयार हूजिये, कचहरी को देर हो रही है।

वकील : तुम अपना और कोई इंतजाम कर लो, भाई ! मैंने तो वकालत छोड़ दी। देश में आग लगी है। गांधीजी कहते हैं, सरकार के साथ हमको कोई भी सम्बन्ध नहीं रखना चाहिए।

मुवक्किल : पर वकील साहब, मेरे मुकदमे का क्या होगा ?

वकिल : मैं क्या जानूं, मैं देश के साथ दगा नहीं कर सकता।

उद्घोषक : इतना ही नहीं, लोगों ने सरकारी उपाधियों तक का वहिष्कार कर दिया। ज्यों-ज्यों आग भड़कती गयी, सरकार का दमन-चक्र भी तेज

होता गया। मजे की बात यह कि दमन ने लोगों के उत्साह में घी का काम किया। स्वदेशी आन्दोलन, बारडोली का सत्याग्रह, नमक सत्याग्रह, व्यक्तिगत सत्याग्रह, 'भारत छोड़ो' आन्दोलन, भारतीय स्वातंत्र्य-संग्राम की ऐसी मंजिलें थीं, जो देश को उत्तरोत्तर लक्ष्य की ओर बढ़ाती गयीं। एक ओर शक्तिशाली विदेशी सत्ता थी, जिसके पास फौजें थीं, तोपें-बन्दूकें थीं, दूसरी ओर गांधीजी थे, जिनके पास कोई भी भौतिक बल न था, लेकिन उनके सत्याग्रह, असहयोग, निष्क्रिय प्रतिरोध तथा उपवास के अमोघ अस्त्रों के आगे सरकार की रूह कांपती थी।

स्त्री-स्वर : अपने इन्हीं अस्त्रों से उन्होंने सारी लड़ाइयां लड़ीं। दक्षिण अफ्रीका में इनके सफल प्रयोग से उनमें असीम आत्म-विश्वास पैदा हो गया था।

पुरुष-स्वर : सत्य और अहिंसा के प्रति उनकी प्रारम्भ से ही निष्ठा थी। वह आजीवन सत्य के राजमार्ग पर चलते रहे।

स्त्री-स्वर : अहिंसा पर भी उनकी इतनी ही गहरी श्रद्धा थी।

पुरुष-स्वर : उनका कहना था कि अहिंसा की शक्ति अपरिमेय है। उसी तरह अहिंसक की शक्ति भी अतुलित है।

स्त्री-स्वर : लेकिन उन्होंने यह भी कहा कि अहिंसा डरपोक का, निर्बल का, धर्म नहीं है। वह तो बहादुर

और जान पर खेलनेवाले का धर्म है। उनके शब्द हैं : "तलवार से लड़ते हुए जो मरता है, वह अवश्य बहादुर है, लेकिन जो मारे बिना धैर्यपूर्वक खड़ा-खड़ा मरता है, वह अधिक बहादुर है।"

उद्घोषक : इनसे भी बढ़कर बात थी मानव के गुणों पर उनका अटूट विश्वास। अपने इसी विश्वास की पारसमणि से जाने कितनी मणियां उन्होंने खोज निकालीं। वे कहते थे—"संसार आज इसलिए खड़ा है कि यहां पर घृणा से प्रेम की मात्रा अधिक है, असत्य से सत्य अधिक है। धोखेबाजी, जोर-जबर तो बीमारियां हैं, सत्य और अहिंसा स्वास्थ्य है। यह बात कि संसार अभी तक नष्ट नहीं हो गया है, इसका प्रत्यक्ष प्रमाण है कि संसार में रोग से अधिक स्वास्थ्य है।

पुरुष-स्वर : गांधीजी द्रष्टा थे। वे जानते थे कि विदेशी सत्ता को तो एक-न-एक दिन इस भूमि से बिदा लेनी ही है, इसलिए उससे संघर्ष करते हुए भी उनका ध्यान अपने देश की बुनियाद को पक्का करने पर रहा था।

स्त्री-स्वर : अपने देश के माथे पर से अस्पृश्यता का कलंक दूर करने के लिए उन्होंने जी-जान से प्रयत्न किया।

पुरुष-स्वर : साम्प्रदायिकता के भूत को भगाने के लिए अपने प्राणों की बाजी लगायी।

स्त्री-स्वर : मद्य-निषेध पर जोर दिया।

पुरुष-स्वर : भारत गांवों में बसता है। गांवों को उठाने के

लिए उन्होंने अनेक सूत्री रचनात्मक कार्यों का जाल सारे देश में बिछा दिया।

स्त्री-स्वर : घर-घर चरखे चलने लगे ।

पुरुष-स्वर : गांधीजी ने कहा, "चरखा वह मध्यवर्ती सूर्य है, जिसके गिर्द अन्य सब तारागण घूमते हैं। ओक नाम के वृक्ष का बीज कितना छोटा होता है, लेकिन जहां एक बार उसकी जड़ जमी कि उसका विस्तार होता जाता है और वह कितनी ही वनस्पतियों को आश्रय देता है। अगर चरखे की वृत्ति फैल गयी तो चरखा सिर्फ चरखा ही थोड़ा रहनेवाला है, उसकी छाया में असंख्य उद्योगों को स्थान मिलेगा। उसकी सुगन्ध से सारी दुनिया सुगन्धित हो जायगी।"

[चर्खे की ध्वनि]

स्त्री-स्वर : खादी आज़ादी के संग्राम की वर्दी बनी। बापू ने कहा :

पुरुष-स्वर : "स्वराज्य के समान ही खादी राष्ट्रीय जीवन के लिए श्वास के जितनी ही आवश्यक है। जिस तरह स्वराज्य को हम नहीं छोड़ सकते, उसी तरह खादी को भी नहीं छोड़ सकते। खादी को छोड़ने के मानी होंगे भारतीय जनता को बेच देना, भारत की आत्मा को बेच देना।"

उद्घोषक : इस प्रकार उन्होंने देश के सर्वांगीण विकास का प्रयत्न किया। उन्होंने श्रम को प्रतिष्ठा दी। वे अपने को दरिद्रनारायण का प्रतिनिधि मानते थे। वे भारत को ऐसा रूप देना चाहते थे, जिनमें निर्धन-से-निर्धन व्यक्ति भी यह अनुभव

कर सके कि यह उसका अपना देश है, जिसके निर्माण में उसकी भी सुनी जायगी, जिसमें ऊंच-नीच का भेद-भाव नहीं होगा, जिसमें सभी जातियां पूर्ण सामंजस्य के साथ जीवनयापन करेंगी। वह कहते थे कि ऐसे भारत में छुआछूत और मादक पदार्थों का अभिशाप नहीं होगा, स्त्रियों को पुरुषों के ही समान अधिकार मिलेंगे। यह था भारत, जिसके वह स्वप्न देखा करते थे।

स्त्री-स्वर : उनकी निगाह सारी दुनिया पर रहती थी।

पुरुष-स्वर : वह कहते थे कि मैं सारे विश्व के दृष्टिकोण से सोचना चाहता हूं। मेरे देश-प्रेम में साधारण रूप से सारी मानवता का हित सम्मिलित है। इसलिए भारत के प्रति मेरी सेवा में मानव-जाति की सेवा शामिल है।

स्त्री-स्वर : उन्हें हर घड़ी दीन, दलितों तथा गरीबों का ध्यान रहता था। गोलमेज परिषद् में लन्दन गये तो वहां भाषण देते हुए उन्होंने सबसे पहले यही कहा, "मैं करोड़ों अभावग्रस्त व्यक्तियों का प्रतिनिधि होकर यहां आया हूं।"

पुरुष-स्वर : शिमला में वायसराय से मिलने गये तो जितना अनिवार्य था, उससे एक क्षण भी अधिक नहीं रुक सके। उन्होंने कहा, "मैं कैसे रुक सकता हूं। आश्रम में मेरे रोगी मेरी राह देख रहे होंगे।"

उद्घोषक : उन्होंने कोटि-कोटि मूक मानवों को वाणी प्रदान की। उनकी सबसे बड़ी विशेषता यह थी

कि उनकी कथनी और करनी में भेद न था। वे जो कुछ कहते थे, उसे पहले अपने जीवन में उतार लेते थे। उन्होंने सत्य और अहिंसा की बात कही तो पहले स्वयं उस पथ के पथिक बन गये। ब्रह्मचर्य की बात कहने से पहले स्वयं ब्रह्मचर्य का व्रत ले लिया। गरीबी की वात मुंह से तब निकाली, जब स्वयं कुटिया में रहने लगे। गांवों की बात कहने से पहले खुद गांव में जा बैठे। उनके कपड़े कम पहनने की भी बड़ी हृदयस्पर्शी कहानी है। बापू उड़ीसा की यात्रा कर रहे थे। एक दिन उन्होंने एक स्त्री को देखा, जो बड़े ही फटे और मैले कपड़े पहने थी। कपड़ा इतना छोटा था कि मुश्किल से आधा शरीर ढंक पाती थी। बापू ने कहा :

गांधीजी : "माई, तुम इतना मैला कपड़ा क्यों पहने हो? इसे धोती क्यों नहीं? इतना आलस किस काम का!"

स्त्री : (हैरानी की आवाज में) "बापू, इसमें आलस की बात नहीं है। मेरे पास दूसरा कोई कपड़ा है नहीं, जिसे पहनकर मैं इसे धोऊं।"

उद्घोषक : यह सुनकर गांधीजी की आंखों में पानी भर आया। उन्होंने उसी दिन से प्रतिज्ञा की कि जब-तक देश में स्वराज्य नहीं होता और गरीब-से-गरीब को भी तन ढंकने को काफी कपड़ा नहीं मिलेगा, तबतक मैं भी कपड़े नहीं पहनूंगा। लाज ढंकने के लिए एक लंगोटी ही मेरे लिए काफी होगी। दीन-दुखियों के साथ एकाकार

होने के कारण ही दुनिया पर उनका इतना प्रभाव था।

[वाद्य-संगीत]

गूंज : **चल पड़े जिधर दो डग मग में,**
चल पड़े कोटि पग उसी ओर।
पड़ गयी जिधर भी एक दृष्टि,
गड़ गये कोटि दृग उसी ओर॥
जिसके शिर पर निज हाथ धरा,
उसके शिर रक्षक कोटि हाथ।
जिस पर निज मस्तक झुका दिया,
झुक गये उसी पर कोटि माथ॥

उद्घोषक : उनका जीवन त्याग-तपस्या की लम्बी कहानी है। जाने क्या-क्या उन्होंने नहीं सहा! अनेक बार जेल गये, घर के विद्रोह का मुकाबला किया, बाहर की यातनाएं झेलीं। लेकिन वे हिमालय की भांति अविचल रहे। देश स्वतंत्र हुआ। हर्ष और आनन्द का सागर उमड़ पड़ा।

[हर्ष सूचक वाद्य-ध्वनि]

पुरुष-स्वर : पर वह उसमें सम्मिलित नहीं हुए। वह तो साम्प्रदायिकता की आग बुझाने के लिए नोआखाली में घूम रहे थे—नंगे पैर, अकेले, नितान्त अकेले। रवीन्द्र ठाकुर का 'एकला चलो' गीत वे नित्य-प्रति सुनते थे। बात यह थी कि वह अकेले होते हुए भी अकेले कहां थे! ईश्वर पर उनकी इतनी जीवंत श्रद्धा थी कि वह हर घड़ी उनके साथ रहता था।

स्त्री-स्वर : शान्ति के महान् उद्देश्य को लेकर वह दिल्ली आये।

पुरुष-स्वर : और इस अभागिन दिल्ली में वह हो गया, जिसकी किसी ने स्वप्न में भी कल्पना न की थी।

[शोकसूचक वाद्य-स्वर]

स्त्री-स्वर : सन् १९४८ की ३० जनवरी की संध्या को जब सूरज पश्चिम में डूब रहा था, पूर्व का यह सूर्य सदा के लिए अस्ताचल को चला गया।

उद्घोषक : इस प्रकार राष्ट्रपिता बापू इस भूमि पर आये और दुनिया के रंग-मंच पर अपना पार्ट बड़ी खूबी से अदा करके चले गये। अपने जीवन में प्यार के अतिरिक्त उन्होंने और कुछ नहीं जाना।

स्त्री-स्वर : उनका हृदय प्यार से छलछलाता था। उसका दान वे सतत करते रहे और उसी के लिए उन्होंने समय आने पर अपने प्राण भी दे दिये।

उद्घोषक : उनका पार्थिव शरीर चला गया, लेकिन ऐसे महापुरुष कभी मरते नहीं हैं। वे मिट्टी की काया के नष्ट हो जाने पर ही अमर बनते हैं।

[प्रेरणादायक वाद्य-ध्वनि] ●

७ : माता भूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः

[पृष्ठभूमि संगीत। उसी के साथ]

कई स्वर : सुरम्य शान्ति के लिए जमीन दो।
महान् क्रान्ति के लिए जमीन दो, जमीन दो।
जमीन दो कि देश का अभाव दूर हो सके।
जमीन दो कि द्वेष का प्रभाव दूर हो सके।
जमीन दो कि भूमिहीन लोग काम पा सकें।
उठा कुदाल बाजुओं का जोर आजमा सकें॥
महा विकास के लिए जमीन दो, जमीन दो।
नये प्रकाश के लिए जमीन दो, जमीन दो॥

[वाद्य-ध्वनि]

पुरुष-स्वर : भूमिदान दो भूमिदान दो।
तोड़ रहे जो सांस सर्वहारा,
उनको तुम प्राण त्राण दो।

[थोड़ा विराम]

स्त्री-स्वर : पुकार भूमिदान की, यह देश की, किसान की।
सुजान की, अजान की, यह लहर है तूफान की॥

[वाद्य-ध्वनि। उसके बंद होने पर]

पुरुष-स्वर : प्रभु ने देकर जन्म सभी को एक समान संवारा है।
पृथ्वी, पानी, पवन सभी पर सम अधिकार हमारा है॥

भेदभाव मिट गया बह रही विमल प्रेम की धारा है।
भूमिदान दो, भूमिदान दो, यही हमारा नारा है।।

उद्घोषक : भूमिदान दो, भूमिदान दो, यही हमारा नारा है। चारों ओर से भूमिदान का स्वर सुनायी दिया। भूमिदान की पावन गंगा देश में जगह-जगह प्रवाहित हुई। महान् साधना का परिणाम था यह। सन् १९५१ की १८ अप्रैल को तेलंगाना के एक छोटे-से देहात से यह गंगा सहज ही उमड़ पड़ी थी। आचार्य विनोबा भावे वर्धा से पैदल यात्रा करते हुए सर्वोदय-सम्मेलन में भाग लेने शिवरामपल्ली गये थे। सम्मेलन के सगाप्त होने पर कुछ लोगों के आग्रह पर तेलंगाना के अशान्त क्षेत्र को देखने निकले। एक दिन उनका पड़ाव नलगुंडा जिले के पोचमपल्ली गांव में था। वहां तीन हजार की आबादी थी. जिसमें में दो हजार के पास जमीन नहीं थी। वहां के सब हरिजन जमीनवालों के यहां मजदूरी करते थे। उनमें से कुछ लोग विनोबा के पास आये और उनसे प्रार्थना की :

पुरुष-स्वर १ : "महाराज, हम दूसरों की चाकरी करते-करते मरे जाते हैं। हमारे पास कोई भी धन्धा नहीं है।"

पुरुष-स्वर २ : "हमारे पास निर्वाह का कैसा भी साधन नहीं है। हमें कुछ जमीन दिलवा दीजिये।"

पुरुष-स्वर ३ : "जमीन मिल जाय तो हम स्वयं उसे जोतेंगे और वोयेंगे। उससे हमारे सारे दुःख दूर हो जायंगे। हम शान्ति से रहेंगे।"

उद्घोषक : विनोबा को उनकी बातें ठीक लगीं। उन्होंने पूछा, कितनी जमीन चाहिए ? एक ने बताया अस्सी एकड़। शाम को प्रार्थना-सभा हुई, उसमें विनोबा ने उन भूमिहीन हरिजनों की मांग लोगों के सामने रखी। सब शान्त थे। अचानक रामचन्द्र रेड्डी नामक एक आदमी उठ खड़ा हुआ। बोला :

पुरुष-स्वर १ : "लीजिये, अपने इन भाइयों के लिए मैं अपनी सौ एकड़ भूमि देता हूं।"

उद्घोषक : बिना किसी जोर-दबाव के स्वेच्छा से दिये इस दान का बड़ा महत्त्व था। विनोबा गद्गद् हो गये। सारी सभा गद्गद् हो गयी। यही था भूदान-गंगा का उद्गम। यहीं से भूदान-यज्ञ आरम्भ हुआ। यहीं से विनोबा अपने इने-गिने साथियों को लेकर अहिंसक क्रान्ति के पथ पर चल पड़े। उनके पास वाहरी साधन न थे, पर उनके हृदय में उस परमपिता के प्रति गहरी निष्ठा थी, जिसने इस महान् यज्ञ का सूत्रपात कराया था। उनकी वाणी में सबके लिए अनुराग था। हृदय में सवके कल्याण की भावना थी। वड़े प्रेमभरे शव्दों में वह कहते थे :

विनोवा : "भगवान् ने पानी, हवा और प्रकाश सवको समान रूप से दिये हैं। किसी एक का उन पर अधिकार नहीं है। तव धरती पर ही क्यों हो ? 'सवै भूमि गोपाल की।' "

उद्घोषक : उनका मांगने का ढंग भी निराला था। वह कहते थे :

विनोबा : "तुम्हारे घर में पांच बच्चे हैं तो छठा मुझे मान लो और मेरा हक मुझे दे दो। जमीन ईश्वर ने सबके लिए बनायी है। वह सबको समान रूप से मिलनी चाहिए। धरती मां है। उससे किसी को भी वंचित न रहने दो। अगर मां को बेटों से अलग करोगे तो भेदभाव बढ़ेगा।"

गूंज : **कौन ले गया बांध साथ में मरकर स्वर्ग-नरक तक धरती।**
न्याय नहीं भोगो तुम धरती, जब जगती है भूखों मरती।
सुन न सको जो करुण पुकारें धरती की ही सुनो गुहारें।
'जियो और जीने दो सबको धरती यों पुकार है करती।
धरती के हैं पुत्र सभी तो, धरती से इसका प्रमाण दो।
भूमिदान दो, भूमिदान दो।

[वाद्य-ध्वनि : उसी की पृष्ठभूमि में]

उद्घोषक : अपनी क्षीण काया को लेकर, अदम्य उत्साह के साथ, विनोबा ५१ दिन तेलंगाना में घूमे। लगभग १२,००० एकड़ भूमि उन्हें मिली। यज्ञ का प्रारम्भ था, लोगों ने अनेक आशंकाएं प्रकट कीं :

पुरुष-स्वर १ : पैदल क्यों घूमते हो ?

विनोबा : "शंकराचार्य, महावीर, बुद्ध, कबीर, चैतन्य, नामदेव जैसे लोग हिन्दुस्तान में पैदल घूमे। वे चाहते तो घोड़े पर भी घूम सकते थे, परन्तु उन्होंने त्वरित साधन का सहारा नहीं लिया, क्योंकि वे विचार का शोधन करना चाहते थे और विचार-शोधन के लिए सबसे उत्तम साधन पैदल घूमना ही है।"

स्त्री-स्वर २ : आपने 'दान' शब्द का प्रयोग क्यों किया है ?

विनोबा : " 'दान' शब्द का अर्थ 'सम-विभाजन' है। मैं उस शब्द के प्राचीन गौरव को फिर से स्थापित करना चाहता हूं।"

पुरुष-स्वर २ : आपने इसे 'यज्ञ' क्यों कहा ?

विनोबा : "इसलिए कि उसमें अमीर-गरीब, छोटे-बड़े सब भाग ले सकें।"

उद्घोषक : फिर भी लोगों का पूरा समाधान नहीं हुआ। उन्होंने कहा :

पुरुष-स्वर १ : तेलंगाना में अशान्ति थी। इसलिए इतनी जमीन उन्हें मिल गयी। अब आगे उन्हें नहीं मिलने की।

पुरुष-स्वर २ : प्रेम से कहीं जमीन की समस्या हल होती है ? यह डेढ़ पसली का बूढ़ा कहां-कहां घूमेगा ?

उद्घोषक : और भी बहुत-सी बातें कही गयीं, पर विनोबा पर इन सबका कोई असर नहीं हुआ। उनके लिए भूदान-यज्ञ भूमि-समस्या का हल नहीं था, वह तो उसके द्वारा नये मूल्य स्थापित करना चाहते थे। उन्होंने कहा :

विनोबा : "मैं दान नहीं लेता हूं, सेवा की दीक्षा देता हूं। जो दें, वे मेरी बात को समझकर दें।"

स्त्री-स्वर १ : उन्होंने यह भी कहा :

विनोबा : "जहां मैं दान लेता हूं, वहां हृदय-मंथन की, हृदय-परिवर्तन की, मातृ-वात्सल्य की, भ्रातृ-भावना की, मैत्री की और गरीबों के लिए प्रेम की आशा करता हूं। यह भूदान अहिंसा का एक प्रयोग है, हृदय-परिवर्तन का प्रयोग है।"

उद्घोषक : भूदान-गंगा का प्रवाह उस समय तीव्र नहीं था।

पर विनोबा के लिए वह उनके जीवन का ध्येय बन गया। वह कुछ दिन वहां रहे। तभी उन्हें योजना-आयोग से बात करने के लिए जवाहरलाल नेहरू का निमंत्रण मिला। वह दिल्ली की ओर पैदल चल पड़े। इस यात्रा में उन्होंने संकल्प किया :

विनोबा : "जबतक परमात्मा की कृपा से मुझमें शक्तिशेष रहेगी, मैं देश की यात्रा करूंगा और भूमिहीनों के लिए जमीन मांगूंगा।"

पुरुष-स्वर : उनके इस संकल्प पर, पुकार पर, बहुत कंठ बोल उठे :

समवेत-स्वर : **आज इक फकीर की जो भूमि की पुकार है।**
पुकार है यह दीन की, यह देश की पुकार है।
पुकार दीन-हीन की न अब भुलायेंगे।
भूमि-दान-यज्ञ हम सफल बनायेंगे।

उद्घोषक : विनोबा ने सोचा कि भूमि-समस्या को सुलझाने के तीन उपाय हो सकते हैं—कत्ल, कानून और प्रेम। हिंसक ढंग से जबरदस्ती जमीन छीनी जा सकती है। पर उसका दुष्परिणाम वह तेलंगाना में देख चुके थे। कानून का रास्ता वह जानते थे कि बड़ा लम्बा होता है। इसलिए प्रेम अर्थात् हृदय-परिवर्तन का मार्ग ही उन्हें सर्वोत्तम लगा। वही उन्होंने अपनाया। २ अक्तूबर १९५१ को गांधी-जयंती के अवसर पर उन्होंने घोषणा की कि मैं पांच करोड़ एकड़ भूमि इकट्ठी करूंगा। मैं सम्पूर्ण खेतिहर भूमि का छठा भाग चाहता हूं। मध्यप्रदेश, विन्ध्य-

प्रदेश, मध्य भारत, राजस्थान और उत्तर प्रदेश के कुछ भागों में होते हुए विनोबा दिल्ली पहुंचे। रास्ते में उन्हें लगभग बीस हजार एकड़ भूमि मिली। ग्यारह दिन राजधानी में रहकर वह उत्तर प्रदेश की यात्रा पर निकल पड़े। ११ सितम्बर, १९५२ को अपनी वर्षगांठ पर उन्होंने निश्चय किया :

विनोबा : "जबतक देश की भूमि-समस्या हल नहीं हो जायगी, मैं जपने आश्रम नहीं लौटूंगा।"

उद्घोषक : भूदान की मन्दाकिनी जब प्रारम्भ हुई, तब बहुत छोटी थी। अब विकसित होने लगी।

स्त्री-स्वर १ : भूमि के साथ-साथ उन्हें बैल मिले, हल मिले और बोने के लिए अनाज, सिंचाई के लिए कुंए।

स्त्री-स्वर २ : उत्तर प्रदेश के कार्यकर्ताओं ने निश्चय किया कि दो वर्ष के भीतर पच्चीस लाख एकड़ भूमि इकट्ठी कर देंगे।

पुरुष-स्वर १ : जिनके पास जमीन या साधन नहीं थे, उन्होंने अपने श्रम का दान किया।

उद्घोषक : इस प्रकार चारों ओर एक नयी हवा फैलने लगी। प्रेम की पुकार पर छोटे-बड़े सभी खुशी-खुशी विनोबा को भूमि अर्पित करने लगे।

पुरुष-स्वर २ : एक रोज तो रात के ग्यारह बजे एक नेत्रहीन भाई आये। उनके पास बारह बीघा जमीन थी। पूरी-की-पूरी देकर चले गये।

उद्घोषक : अगले दिन विनोबा ने अपने प्रवचन में उस घटना का उल्लेख किया, तो उनका कंठ अवरुद्ध

हो गया। आंखों में आंसू छलक आये। बड़ी कठिनाई से मुंह खोला तो बोले :

विनोबा : "वह व्यक्ति और कोई नहीं, रामचरण के रूप में स्वयं कृष्ण भगवान् ही थे।"

स्त्री-स्वर १ : उनके यज्ञ में स्त्रियों ने भी भाग लिया। एक वृद्धा मां रातभर ठंड में बैठी रही और अगले दिन अपनी पूरी भूमि उन्हें अर्पित कर गयी।

उद्घोषक : इस वृद्धा के दान पर विनोबा ने गद्गद होकर कहा :

विबोबा : "इस यज्ञ में कितनी ही शबरियों ने अपने बेर भेंट किये।"

पुरुष-स्वर : उन्हें छोटे-छोटे दान मिले। वड़े-बड़े दान मिले। हमीरपुर जिले में उन्हें एक पूरा-का-पूरा गांव ही मिल गया। मंगरौठ की बात है। विनोबा पास से गुजर रहे थे। कुछ लोग मिलने आये। विनोबा ने उनसे इतना ही कहा :

विनोबा : "सबै भूमि गोपाल की।"

स्त्री-स्वर १ : इस मंत्र ने जादू का काम किया।

पुरुष-स्वर १ : सब लोगों ने मिलकर समूचा गांव उन्हें सौंप दिया।

स्त्री-स्वर २ : बाद में तो उन्हें एक-एक व्यक्ति से लाख-लाख एकड़ तक भूमि मिली।

उद्घोषक : भूदान की कल्पना अब काफी विकसित हो चुकी थी और उसने सारे देश का ध्यान अपनी ओर आकर्षित कर लिया था। लोग विनोवा को 'बाबा' कहने लगे। कुछ लोगों ने नयी आशंकाएं प्रकट कीं।

पुरुष-स्वर १ : भूदान से जमीन के छोटे-छोटे टुकड़े हो जायंगे। उन पर खेती करना आर्थिक दृष्टि से लाभ-दायक नहीं होगा।

पुरुष-स्वर २ : उन छोटे-छोटे टुकड़ों पर खेती के साधनों, जैसे हल-बैल आदि का पूरा उपयोग नहीं होगा।

पुरुष-स्वर ३ : खेती पर ध्यान केन्द्रित करने से देश के उद्योग-धन्धों को हानि पहुंचेगी।

उद्घोषक : विनोबा बाबा ने इन सबको बड़ी गम्भीरता से उत्तर दिया। उन्होंने कहा :

विनोबा : "जमीन के छोटे-छोटे टुकड़े हो जायंगे तो क्या! जमीन से लोगों का आत्मीयता का नाता जुड़ जायगा और उससे पैदावार बढ़ेगी। "सह-कारिता के आधार पर खेती करेंगे तो साधनों का पूरा उपयोग अपने-आप हो जायगा। "उद्योग-धन्धों को हानि क्यों पहुंचेगी? आखिर खेती-बारी में पूरा समय तो लगता नहीं है। खेती से बचे समय का उपयोग पूरक उद्योग-धन्धों में किया जा सकता है।"

[आशा सूचक वाद्य ध्वनि]

उद्घोषक : इस प्रकार शंकाओं का समाधान करते हुए, अडिग विश्वास के साथ, बाबा की पद-यात्रा चलती रही, चलती रही। हजारों कार्यकर्ता उनके यज्ञ में आ जुटे। सारे देश का ध्यान उनकी ओर आकर्षित हुआ। विदेशियों का ध्यान भी उनकी ओर गया। भूदान-यज्ञ का स्वर प्रखर हो उठा।

पुरुष-स्वर : उत्तर प्रदेश के बाद बाबा ने भगवान् बुद्ध की

भूमि बिहार में प्रवेश किया। लोगों की श्रद्धा उमड़ पड़ी। वहां बाबा ने संकल्प किया कि जब-तक उन्हें सारे बिहार की भूमि का छठा भाग नहीं मिल जायगा, तबतक वह बिहार नहीं छोड़ेंगे। पटना में एक नयी बात हुई। भूदान में सम्पत्तिदान भी आ जुड़ा। उस विचार को स्पष्ट करते हुए बाबा ने कहा :

विनोबा : "भूदान के कार्य के विकास के साथ-साथ यह भी स्पष्ट होता गया कि आन्दोलन-सम्बन्धी उद्देश्य तबतक पूरा नहीं हो सकता, जबतक कि हम सम्पत्ति और जायदाद का भी एक अंश न मांगें। यह मांग आय के छठे भाग के बराबर होगी।"

उद्घोषक : इस प्रकार भूदान में सम्पत्तिदान की धारा भी आ मिली। भूदान-यज्ञ का क्षेत्र अब और व्यापक हो गया। गया में जयप्रकाश नारायण के आह्वान पर अनेक लोगों ने अपना जीवन ही इस काम के लिए अर्पित कर दिया। स्वयं विनोबा ने 'भूदान-यज्ञमूलक, ग्रामोद्योग-प्रधान अहिंसक क्रान्ति के लिए अपना जीवन समर्पित' कर दिया।

[वाद्य-ध्वनि]

गूंज : जिसके बल पर राष्ट्र-भवन की मुसकाती दीवारें।
जिसके मन पर गौरव करतीं शत-शत करुण पुकारें॥
श्रमिकों के खंडहर पर आकर जिसने दीप जलाया।
घर बैठे ही वही तपस्वी धन्य भाग जो पाया।
संत तभी दर्शन देते हैं, जब पुण्य उभरते हैं।
संत, आपकी चरण-धूल से अगजग तरते हैं।

स्त्री-स्वर १ : १९५५ के प्रारम्भ में बंगाल होते हुए विनोबा उड़ीसा पहुंचे। उड़ीसा में उन्हें लाखों एकड़ भूमि मिली और अकेले कोरापुट जिले में ६०० पूरे गांव मिले। जगन्नाथ पुरी में उन्होंने कहा :

विनोबा : "मैं विश्व-शान्ति के लिए भूमि दान चाहता हूं। सब लोग दो वर्ष तक इसमें सहयोग दें, जिससे १९५७ तक एक अहिंसात्मक शासन-मुक्त समाज की स्थापना हो सके।"

[वाद्य ध्वनि]

उद्घोषक : बिहार में बाबा ने 'भूमि दो, भूमि दो' कहते हुए प्रवेश किया था। वहां से चले तो लोग कहते थे, 'भूमि लो, भूमि लो।' यही उड़ीसा में हुआ। विनोबा घर-घर अलख जगाते हुए, अहिंसक क्रान्ति का शंखनाद करते हुए, दक्षिण भारत में घूमे। भारत का कोई भी भाग ऐसा नहीं बचा, जहां जाकर बाबा ने अहिंसक क्रान्ति का सन्देश न दिया हो। उनकी यात्रा अखण्ड चलती रही। न जाड़े में रुके, न गर्मी में, न वर्षा में, न बीमारी में। लोगों ने कहा—"थोड़ा विश्राम ले लो, बाबा।" उनका जवाब था—
विनोबा : "सूर्य कभी आराम करता है ? चन्द्रमा कभी रुकता है ? नदी का प्रवाह कभी थमता है ?"

उद्घोषक : उनकी इस साधना से विह्वल होकर देशरत्न डॉ० राजेन्द्रप्रसाद ने कहा :

राजेन्द्रप्रसाद : "यह हमारे सौभाग्य की बात है कि आज विनोबाजी जैसा एक सन्त प्राचीन काल के संतों

की तरह भारत के किसी एक कोने में न रहकर सारे भारतवर्ष का वर्षों से चक्कर लगा रहा है और बड़ी-बड़ी सभाओं के द्वारा ही नहीं, बल्कि एक-एक छोटे-बड़े सब प्रकार के लोगों से मिल-कर अपना सन्देश सुना रहा है और उनके हृदय के अन्दर वे सब भावनाएं जागृत कर रहा है, जिनके बल पर हम आगे बढ़ सकते हैं। हम सब आज ईश्वर से यही प्रार्थना करें कि हमको उनके दर्शन मिलते रहें, उनकी शिक्षा सुनने का अवसर मिलता रहे और हम उससे लाभान्वित होते रहें।"

[वाद्य ध्वनि]

उद्घोषक : सारे देश में लाखों व्यक्ति भूदान के काम में जुट गये। उन्हें सब पक्षों के नेताओं और कार्य-कर्ताओं का सहयोग मिला। एक अवसर पर विनोबा ने कहा :

विनोबा : "सब नेताओं ने विचार-विमर्श करके ग्रामदान को सम्मति दी और देश को आदेश किया कि सब लोग इस काम को उठा लें। यह घटना भूदान-आन्दोलन के इतिहास में तो अपूर्व ही है, परन्तु हम समझते हैं कि स्वराज्य-प्राप्ति के बाद इस प्रकार की कोई घटना नहीं हुई है कि जहां सब पक्षों के लोग इकट्ठे हुए हों और एक निर्णय पर आये हों। इस दृष्टि से इस घटना का महत्त्व है और इसके बाद आशा करनी चाहिए कि सारे देश की ताकत इस काम में लगेगी। जब देश के सब नेतागण आदेश देते

हैं, तो इसके पीछे हम सब लोगों को ताकत लगानी चाहिए। इससे बुनियाद बनेगी।"

उद्घोषक : विनोबा को लाखों एकड़ भूमि मिली, लेकिन समाज की नवरचना के आकांक्षी विनोबा को इससे कहां सन्तोष होनेवाला था! वह भूदान से बढ़कर ग्रामदान पर आ गये और उससे भी आगे उन्हीं के शब्दों में :

विनोबा : "भूदान में से ग्रामदान निकला, सम्पत्तिदान निकला, श्रमदान निकला, जीवन-दान निकला, बुद्धिदान निकला। ऐसी तरह-तरह की शाखाएं उसमें से फूट निकलीं। तो नया-नया विचार निकल ही रहा है और फिर आखिरी विचार है शांति-सेना और सर्वोदय। यह विचार अभी-अभी उत्पन्न हुआ है, तो किसी ने कहा, बाबा, इसके आगे जरा रुकियेगा तो अच्छा रहेगा। बहुत ज्यादा कार्यक्रम बढ़ेगा तो इसका विकास रुकेगा।' मैंने कहा, 'मेरे हाथ में रोकने का नहीं। मैंने जो शुरू किया, आखिरी समझकर किया। शान्ति-सेना और सर्वोदय ये आखिरी हैं, ऐसा नहीं समझता हूं। लेकिन आखिरी हैं, कहते-कहते ब्रह्मविद्या का विचार निकला।' उसके बाद मैंने कहा, 'प्रेम-क्षेत्र और कर्म-क्षेत्र को एक बनाओ। हमारा प्रेम-क्षेत्र हमारे घर में, कर्म-क्षेत्र साथियों में। हमारे दो टुकड़े हो जाते हैं। हमारे जो प्रेम के साथी हैं वे काम के बनें और काम के साथी हैं, वे प्रेम के बनें, तब हम आगे बढ़ेंगे।"

उद्घोषक : भारत गांवों का देश है। देहात का किसान और मजदूर, ये दोनों देश की बुनियाद हैं। विनोबा मानते थे कि किसानों और मजदूरों को ऊपर उठाना हो तो ग्रामदान से बढ़कर और कोई उपाय नहीं। राष्ट्रपिता महात्मा गांधी की 'सर्वोदय' अर्थात् सबके उदय की कल्पना को विनोबाजी ने विकसित किया और पोषण दिया।

स्त्री-स्वर १ : भूदान के द्वारा वह भूमिपुत्रों का भू-माता से आत्मीयता का नाता जोड़ना चाहते थे, जिससे देश का प्रत्येक नागरिक कह सके, "भूमि मेरी माता है, मैं उसका पुत्र हूं।"

पुरुष-स्वर १ : ग्रामदान के द्वारा वह ऐसे समाज की रचना करना चाहते थे, जिसमें कोई किसी का शोषण न करे, न कोई अपना शोषण होने दे, सब मिल-कर प्रेम से रहें, एक-दूसरे की सहायता करें और उन्हें विकास का पूरा अवसर मिले।

उद्घोषक : कुछ लोगों को भय हुआ कि ग्रामदान से व्यक्ति-गत स्वामित्व नष्ट हो जायगा। विनोबा का स्पष्ट उत्तर था, "किसी-न-किसी निमित्त से भूमि या उसका स्वामित्व जनता के हाथों से निकलकर दूसरों के पास जा रहा है। ऐसी हालत में जमीन सामान्य जन के पास रहे, इस-लिए आवश्यक है कि स्वामित्व गांव के हाथ में पकड़ रखा जाय और काश्त व्यक्ति के हाथ में।"

स्त्री-स्वर २ : विनोबा को हजारों ग्रामों का दान मिला, अनेक

प्रखण्ड मिले। बिहार को विनोबा ने अपना कार्य-क्षेत्र बना रखा था और वहां के कार्यकर्ताओं ने उन्हें पूरे-का-पूरा बिहार दिलवाने का प्रयत्न किया। लोगों ने पूछा, "प्रखण्डदान होने के बाद क्या-क्या करना पड़ेगा?" लोक-हित की भावना से ओतप्रोत विनोबा का उत्तर था: "गांव-गांव के लोग अपनी योजना बनायेंगे, उन्हें भगवान् का आशीर्वाद मिलेगा और भारत में लोक-शक्ति प्रकट होगी।"

उद्घोषक : ईश्वरीय शक्ति पर विश्वास रखनेवाले विनोबा विज्ञान की प्रगति के भी समान रूप से समर्थक थे। वे जानते थे और मानते थे कि यह युग विज्ञान का है। पर उनका विश्वास था कि विज्ञान का पूरा लाभ तब मिल सकता है, जब कि उसके साथ आध्यात्मिकता यानी रूहानियत का सामंजस्य हो। वह कहते थे:

विनोबा : "जाहिर है कि साइन्स अब जोड़ना चाहता है। तोड़नेवाले साइन्स ने जोड़नेवाले बना दिये हैं। मैं बहुत दफा मिसाल देता हूं, जिस पैसिफिक समुद्र ने अमरीका और जापान को दो सिरे पर रखा था, दुनिया के दो कोनों पर—एक फार ईस्ट (सुदूर पूर्व) और दूसरा फार वेस्ट (सुदूर पश्चिम) बन गया था, उस समुद्र को दोनों ने जोड़ा है और दोनों पड़ोसी देश बने हैं। जो समुद्र तोड़नेवाला था, वह अब जोड़नेवाला बन गया। ऐसे जड़ पदार्थ, जो तोड़ते थे, वे भी जोड़ने लगे। पृथ्वी से इतनी दूर रहा हुआ

चन्द्रमा भी आज पृथ्वी के साथ जुड़ा जा रहा है। कुत्ते, जो ऊंची उड़ान भरने की कल्पना कर ही नहीं सकते थे, वे ऊंचे आसमान पर उड़ रहे हैं।"

उद्घोषक : और अब तो मनुष्य चन्द्रलोक की यात्रा कर आया है। विनोबा ने आगे कहा :

विनोबा : "उस जमाने में मनुष्य मनुष्य के बीच संशय की दीवार खड़ी करने वाली सियासत काम की नहीं रही, यह स्पष्ट है। साइन्स तो जब से मनुष्य पैदा हुआ है, तब से ही पैदा हुआ है और धीरे-धीरे बढ़ता रहा है। अग्नि की खोज जब हिन्दुस्तान में हुई, तब ऋषियों को कितना आनन्द हुआ था और उसमें कितनी दिव्यता का उन्होंने दर्शन किया था! वह सारा वर्णन हमें वेद-सूक्तों में मिलता है। एक परमेश्वर अपने हाथ में आया। देवता हमको पैदा करते हैं, हमारा पालन-पोषण करते हैं, लेकिन यह एक देवता हम पैदा करते हैं। इस तरह से बड़ा ही उत्साह हमको मालूम हुआ था और बहुत भक्तिभाव से अग्नि की तरफ देखते थे और वह सब हमको वेद में पढ़ने को मिलता है।"

[थोड़ा विराम]

विनोबा : "अग्नि की खोज जिस जमाने में हुई, उस जमाने में, जीवन में, बहुत फर्क पड़ा और उसके बाद और भी कई शोध हो चुके और अब तो आणविक शक्ति की पहचान मनुष्य को हो गयी है। साइन्स दिन-ब-दिन प्रगति कर रहा है।"

[वाद्य-ध्वनि]

विनोबा : "मैं १९४२ से १९४५ तक तीन साल लगातार जेल में रहा। उससे पहले व्यक्तिगत सत्याग्रह के सिलसिले में साल-सवा साल। मैं चिन्तन करता रहा और मेरे ध्यान में बार-बार यह आया कि हमको अहिंसा की सिखावन दी जा रही है। कई कारणों से हमारे लिए वह लाभ-दायक है। यह सब हमारी सभ्यताओं में पली हैं। लेकिन इसके आगे अहिंसा अत्यन्त अनिवार्य होनेवाली है, क्योंकि साइन्स का जमाना आ रहा है।"

उद्घोषक : आगे चेतावनी देते हुए उन्होंने कहा :

विनोबा : "उस हालत में अहिंसा के साथ अगर साइन्स का विवाह होगा तो उसमें से मंगलमय जीवन पैदा हो सकता है। दुनिया में स्वर्ग आ सकता है और अगर साइन्स का हिंसा के साथ सम्बन्ध बना तो मानव और मानवता दोनों एक साथ मिटनेवाले हैं।"

[दुःख सूचक वाद्य ध्वनि]

पुरुष-स्वर १ : सारे देश में विनोबा की वाणी मुखरित हुई। विदेशों में भी लोगों ने आशाभरी दृष्टि से उनकी ओर देखा। विनोबा ने इसे 'प्रजासूय' कहा और सबकी सहायता की मांग की।

स्त्री-स्वर १ : यह दरिद्रनारायण की सेवा का यज्ञ था।

स्त्री-स्वर २ : इसी से ग्राम-राज्य स्थापित होगा।

स्त्री-स्वर १ : इसी से सर्वोदय की कल्पना साकार होगी। राम-राज्य स्थापित होगा।

[हर्षसूचक वाद्य ध्वनि] ●

८ : सबजन एकसमान

[गंभीर वातावरण की द्योतक वाद्य-ध्वनि। उतार-चढ़ाव के उपरान्त धीमी ध्वनि की पृष्ठभूमि में]

गूंज : (प्रार्थना के स्वर में)
'माता भूमिः पुत्रो अहं पृथिव्याः।'
—भूमि माता है। मैं उसका पुत्र हूं।
[वाद्य-ध्वनि धीमी-धीमी जारी रहे]

पुरुष-स्वर १ : (धीमे स्वर में)
यह धरती तुम्हारी माता है और तुम सब भाई-भाई हो। अपने माथे के पवित्र जल से तुम इसके चरण पखारते रहना और श्रम के पारिजात-पुष्प चढ़ाते रहना।

[किंचित् निस्तब्धता। पुनः वाद्य-ध्वनि। उसके धीमे पड़ते ही]

पुरुष-स्वर २ : (गंभीरता से)
विद्वान्, विनयी और चांडाल को,
गाय, हाथी और कुत्ते को
तू एक ही दृष्टि से देख
एक का ही दर्शन अनेकों में कर।
यह समस्त चर-अचर जगत् परमेश्वर से व्याप्त है,

यहां अनेकपन कुछ भी नहीं है।
जो मैं हूं, वही तू है।

[एक साथ तीव्र वाद्य-ध्वनि]

उद्घोषक : ये हैं हमारे धर्म-ग्रंथों और संत-पुरुषों के वचन, जिनकी ध्वनि सहस्रों बर्ष के अंतर को लांघकर आज भी इस भूमि पर गूंज रही है। यह धरती तुम्हारी माता है...तुम सब भाई-भाई हो... कितने मधुर हैं ये स्वर, कितने उदात्त, कितने प्रेरणादायी। कितना पावन है इनका संदेश! भारत-भूमि की सनातन काल से यह विशेषता रही है कि आचार-विचार, धर्म-विश्वास, खान-पान, भाषा-बोली आदि का भेद होते हुए भी उसने समन्वय को अपना मूल-मंत्र बनाया है। उसका मानस देश की परिधि में ही आबद्ध नहीं रहा, विश्वात्मा के साथ एकाकार रहा है, लेकिन...लेकिन, जरा ठहरिये, यह सामने क्या हो रहा है?

भिक्षु : (बड़ी आकुलता से) देवि, देवि, मुझे पानी पिला दो। मैं बहुत दूर से आ रहा हूं। प्यास के मारे मेरा गला सूख रहा है।

कन्या : (घबराहट के साथ) स्वामीजी...

[खामोशी]

भिक्षु : अरे, तुम रुक क्यों गयीं? कहो, क्या बात है?

कन्या : महाराज, बात यह है कि...कि...

भिक्षु : यह क्या? तुम बार-बार चुप क्यों हो जाती हो? जो कहना है, साफ-साफ क्यों नहीं कहतीं? अच्छा ठीक है, जो कहना है बाद में कहना।

पहले मुझे पानी पिला दो। प्यास के मारे मेरे प्राण निकले जा रहे हैं।

कन्या : (अवरुद्ध कण्ठ से) स्वामीजी, मैं चाण्डाल-कन्या हूं।

भिक्षु : (जोर से हंसकर) बस, इतनी-सी बात है। इसमें परेशान होने की क्या बात है! मैंने तुमसे पानी मांगा है, जाति नहीं मांगी।

[निःस्तब्धता। फिर शोर। उत्तेजित स्वर]

कई-स्वर : नहीं-नहीं, हम सहन नहीं कर सकते। अछूत लड़की संघ में! छिः-छिः, हमारा धर्म भ्रष्ट हो जायगा। हम ऐसा कदापि न करने देंगे।

[शोर में वृद्धि। मिले-जुले ऊंचे स्वर। अनन्तर शान्ति]

महाराजा : हे प्रभो! आपके अछूत लड़की को संघ में शामिल कर लेने से सारी प्रजा में असंतोष पैदा हो गया है। ऊंची जाति के लोग क्षुब्ध हैं। उन्हें भय है कि नीच जाति के संसर्ग से उनके धर्म की हानि होगा।

बुद्ध : राजन्, इस दुनिया में कौन छोटा है और कौन बड़ा? ब्राह्मण और चाण्डाल एक ही योनि से उत्पन्न होते हैं।

महाराजा : भगवन्, आपका कहना ठीक है, लेकिन ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र—ये अलग-अलग जातियां तो हैं।

बुद्ध : नहीं, राजन्, ये अलग-अलग नाम आदमी के रखे हुए हैं। अलग-अलग नाम लेने से उनमें सचमुच का भेद तो पैदा हो नहीं जाता। आदमी आदमी एक समान हैं। उनके नाक,

कान, हाथ-पैर, आंख सब एक ही तरह के हैं।

[वाद्य-ध्वनि की पृष्ठभूमि में लय के साथ]

गूंज : **ना कोई ऊंचा, ना कोई नीचा**
ना कोई छूत-अछूत है,
कैसा ब्राह्मण, कैसा भंगी,
ईश्वर के सब पूत हैं।

उद्घोषक : यह था आज से कई हजार वर्ष पूर्व का एक चित्र, जो अकस्मात् मानस-पटल पर उभर आया था। मनुष्य के कुसंस्कारों ने, समाज की पुरातन रूढ़ियों ने, इंसान इंसान के बीच ऊंच-नीच की दीवारें सदा खड़ी की हैं, लेकिन उनमें कोई सार नहीं है। प्रकृति ने सारे मनुष्यों को एक-सा पैदा किया है। अपनी सृष्टि में उसनें कोई भेदभाव नहीं रखा। उसका सूर्य सबको समान रूप से प्रकाश और गर्मी देता है, उसका चन्द्रमा सबको समान रूप से शीतलता प्रदान करता है, उसका आकाश, उसकी वायु सबको समान रूप से जीवन देती है, परन्तु रुकिये, यह कैसा दृश्य सामने आ गया है ?

कई स्वर : (खीज के साथ) अरी ओ बुढ़िया, रास्ते से हट। तू अंधी है क्या ? दीखता नहीं, स्वामीजी आ रहे हैं ! रास्ते को नापाक न कर।

बुढ़िया : (हंसती हुई) भैया, मुझे यह तो बताओ कि मैं हटकर कहां जाऊं ? तुमने मुझे अछूत मान रखा है, पर यह धरती तो सारी ही भगवान् के पवित्र चरणों से नाप ली गयी है। सब नारायण का मन्दिर हैं। तुम सब ज्ञानी हो। मुझ मूरख को

बता दो कि कौन-सी जगह भगवान् की नहीं है ?

[वाद्य-ध्वनि, उसके बाद थोड़ी खामोशी]

रामानुजाचार्य : (विह्वल होकर) देवि, तुमने मेरी आंखें खोल दीं। मैं संन्यासी हूं, पर मुझमें कितना मिथ्या अभिमान भरा है। मैंने जो तिलक, माला आदि वैष्णव चिह्न धारण कर रखे हैं, वे सब तुम्हारे शरीर पर अधिक शोभा दे सकते हैं।

कई स्वर : पर स्वामीजी, यह बुढ़िया तो...

रामानुजाचार्य : नहीं, यह अछूत नहीं है। जो सारी भूमि को नारायण की भूमि मानता है, वह अछूत नहीं हो सकता। तुम लोग जाति का अभिमान, धन का अभिमान और ज्ञान का अभिमान तिनके के समान छोड़ दो, क्योंकि इनमें से एक का भी अभिमान आदमी को पतन की ओर ले जा सकता है।

[हर्षसूचक वाद्य-ध्वनि]

गूंज : **प्रभुजी, कौन ऊंच को नीचा।**
तूने जगत् एक रस सींचा।
प्रभुजी, नहिं कोई छूत-अछूता।
तेरे एक सरिस सब पूता।
प्रभुजी, घट-घट तेरा बासा।
जल नौखण्ड धरणि आकासा।

उद्घोषक : यह थी स्वामी रामानुजाचार्य के जीवन की एक घटना, जिसने उन्हें एक नयी दृष्टि प्रदान की, उनके अंतर में एक नये प्रकाश का उदय किया। आगे चलकर जब वह वृद्ध हो गये, तब नदी में स्नान करते समय सहारे के लिए वह अपने

कान, हाथ-पैर, आंख सब एक ही तरह के हैं।

[वाद्य-ध्वनि की पृष्ठभूमि में लय के साथ]

गूंज : **ना कोई ऊंचा, ना कोई नीचा**
ना कोई छूत-अछूत है,
कैसा ब्राह्मण, कैसा भंगी,
ईश्वर के सब पूत हैं।

उद्घोषक : यह था आज से कई हजार वर्ष पूर्व का एक चित्र, जो अकस्मात् मानस-पटल पर उभर आया था। मनुष्य के कुसंस्कारों ने, समाज की पुरातन रूढ़ियों ने, इंसान इंसान के बीच ऊंच-नीच की दीवारें सदा खड़ी की हैं, लेकिन उनमें कोई सार नहीं है। प्रकृति ने सारे मनुष्यों को एक-सा पैदा किया है। अपनी सृष्टि में उसनें कोई भेदभाव नहीं रखा। उसका सूर्य सबको समान रूप से प्रकाश और गर्मी देता है, उसका चन्द्रमा सबको समान रूप से शीतलता प्रदान करता है, उसका आकाश, उसकी वायु सबको समान रूप से जीवन देती है, परन्तु रुकिये, यह कैसा दृश्य सामने आ गया है ?

कई स्वर : (खीज के साथ) अरी ओ बुढ़िया, रास्ते से हट। तू अंधी है क्या ? दीखता नहीं, स्वामीजी आ रहे हैं ! रास्ते को नापाक न कर।

बुढ़िया : (हंसती हुई) भैया, मुझे यह तो बताओ कि मैं हटकर कहां जाऊं ? तुमने मुझे अछूत मान रखा है, पर यह धरती तो सारी ही भगवान् के पवित्र चरणों से नाप ली गयी है। सब नारायण का मन्दिर हैं। तुम सब ज्ञानी हो। मुझ मूरख को

बता दो कि कौन-सी जगह भगवान् की नहीं है ?

[वाद्य-ध्वनि, उसके बाद थोड़ी खामोशी]

रामानुजाचार्य : (विह्वल होकर) देवि, तुमने मेरी आंखें खोल दीं। मैं संन्यासी हूं, पर मुझमें कितना मिथ्या अभिमान भरा है। मैंने जो तिलक, माला आदि वैष्णव चिह्न धारण कर रखे हैं, वे सब तुम्हारे शरीर पर अधिक शोभा दे सकते हैं।

कई स्वर : पर स्वामीजी, यह बुढ़िया तो...

रामानुजाचार्य : नहीं, यह अछूत नहीं है। जो सारी भूमि को नारायण की भूमि मानता है, वह अछूत नहीं हो सकता। तुम लोग जाति का अभिमान, धन का अभिमान और ज्ञान का अभिमान तिनके के समान छोड़ दो, क्योंकि इनमें से एक का भी अभिमान आदमी को पतन की ओर ले जा सकता है।

[हर्षसूचक वाद्य-ध्वनि]

गूंज : **प्रभुजी, कौन ऊंच को नीचा।**
तूने जगत् एक रस सींचा।
प्रभुजी, नहिं कोई छूत-अछूता।
तेरे एक सरिस सब पूता।
प्रभुजी, घट-घट तेरा बासा।
जल नौखण्ड धरणि आकासा।

उद्घोषक : यह थी स्वामी रामानुजाचार्य के जीवन की एक घटना, जिसने उन्हें एक नयी दृष्टि प्रदान की, उनके अंतर में एक नये प्रकाश का उदय किया। आगे चलकर जब वह वृद्ध हो गये, तब नदी में स्नान करते समय सहारे के लिए वह अपने

किसी शूद्र शिष्य के कंधे पर हाथ रखते थे। जिस अभिमान को वह स्नान, शौच और आचमन से दूर नहीं कर सकते थे, वह शूद्र-कुमार के स्पर्श से दूर हो गया।

[वाद्य ध्वनि]

उद्घोषक : उन्होंने तथा दूसरे बहुत-से संतों ने इस भूमि पर आध्यात्मिकता की ऐसी पावन मंदाकिनी प्रवाहित की, जिससे शीतल जल में अवगाहन कर अनगिनत नर-नारियों के कलुष धुल गये, हृदय निर्मल हो गये। पर दुर्भाग्य से समाज से ऊंच-नीच, छूत-अछूत की व्याधि समूल नष्ट नहीं हुई। विदेशी सत्ता के जमाने से उसे और भी पोषण मिला और बीसवीं शताब्दी के आरम्भ में इस रोग की जड़ें बहुत गहरी हो गयीं।

[शोकसूचक वाद्य-ध्वनि]

भंगी : (करुण स्वर में) मालिक, मुझे एक डोल पानी दे दो। बस, एक डोल। घर में बच्चे प्यास से तड़प रहे हैं।

ब्राह्मण : (उच्चता की भावना से) भाग यहां से! बड़ा आया है, पानी लेनेवाला! जा-जा, उस पोखरे में से पानी ले आ।

भंगी : महाराज, गर्मी के मारे सारे पोखरे सूख गये हैं। कहीं एक बूंद भी पानी नहीं है। होता तो मैं क्यों आपको कष्ट देता! एक डोल पानी दे दीजिये। मैं आपके हाथ जोड़ता हूं।

ब्राह्मण : (क्रोध में भरकर) नहीं, मैं नहीं दे सकता। चल

हट यहां से । खबरदार, जो कभी इस ओर आया ।

उद्घोषक : अछूतों के प्रति सवर्णों का ऐसा ही व्यवहार था। बेचारे अछूत गढ़ों और पोखरों के गन्दे पानी से अपना काम चलाते थे। सवर्णों के कुंओं पर पैर रखने तक की उन्हें हिम्मत नहीं होती थी। यदि उन्हें कोई अधिकार था तो ऊंची जातियों की गुलाम की तरह सेवा करने का।

पुरुष-स्वर १ : उन्हें मैला उठाना पड़ता था।

पुरुष-स्वर २ : उन्हें नालियां साफ करनी पड़ती थीं।

स्त्री-स्वर १ : उन्हें सवर्णों की जूठन खानी पड़ती थी।

पुरुष-स्वर १ : उन्हें ऊंची जाति के लोग छू नहीं सकते थे। छू जाने पर उन्हें स्नान करना पड़ता था।

पुरुष-स्वर २ : उन्हें समाज में हर तरफ की लांछनाएं सहनी पड़ती थीं।

पुरुष-स्वर १ : यहां तक कि उनके लिए मन्दिरों के द्वार भी बन्द थे।

[वेदनासूचक वाद्य-ध्वनि]

स्त्री-स्वर १ : माना जाता था कि अछूतों की छाया पड़ने से देव-मूर्तियां अपवित्र हो जायंगी।

पुरुष-स्वर २ : उनमें से देवता के प्राण निकल जायेंगे।

उद्घोषक : कितनी बड़ी विडम्बना थी ! बच्चे की सफाई करनेवाली मां प्रेम पाती है, डॉक्टर रोगी की सेवा करते कृतज्ञता का पात्र बनता है, पर हमारे घर और गलियों की सफाई करनेवाला व्यक्ति अछूत कहलाता है और नीची निगाह से देखा जाता है। देश के दस-पांच नहीं, सौ-दो

सौ नहीं, सात करोड़ व्यक्ति इस दुर्व्यवहार के शिकार हो रहे थे। सामाजिक रूप में वे अछूत थे, आर्थिक दृष्टि से गुलामों से भी बदतर थे और धार्मिक दृष्टि से वे कठोर बन्धनों में जकड़े थे। लेकिन कहते हैं, जब इस धारा पर धर्म की हानि होती है तो कोई-न-कोई महापुरुष अवतरित होकर धर्म की रक्षा करता है। अछूतों के लिए जब सारे रास्ते बन्द थे, उनके चारों ओर घोर अन्धकार छाया था, सहसा एक ज्योति उदित हुई। वह थी युग-पुरुष गांधी के रूप में। मानवता के इस पुजारी के लिए सात करोड़ तो दूर, एक व्यक्ति का भी तिरस्कार असह्य था। उसने छुआछूत को हिन्दू-जाति के लिए भयंकर अभिशाप माना और उसके विरुद्ध बड़े जोर की आवाज उठायी।

पुरुष-स्वर २ : उन्होंने कहा—गांधीजी, "यदि हम भारत की आबादी के इतने बड़े अंश को स्थायी गुलामी की हालत में रखना चाहते हैं और उन्हें जान-बूझ कर राष्ट्रीय संस्कृति के फलों से वंचित रखना चाहते हैं, तो स्वराज्य एक अर्थहीन शब्द-मात्र होगा। आत्म-शुद्धि के इस महान् आन्दोलन में हम भगवान् की सहायता की आकांक्षा रखते हैं लेकिन उनकी प्रजा के सबसे अधिक सुपात्र अंश को मानवता के अधिकारों से वंचित रखते हैं। यदि हम स्वयं मानवीय दया से शून्य हैं तो उसके सिंहासन के निकट दूसरों की निष्ठुरता से मुक्ति पाने की याचना हम नहीं कर सकते।

स्त्री-स्वर : उन्होंने यहा भी कहा—गांधीजी : "अस्पृश्यता जाति-व्यवस्था की उपज नहीं है, बल्कि उस ऊंच-नीच के भेद की भावना का परिणाम है, जो हिन्दू-धर्म में घुस गयी है और उसे भीतर-ही-भीतर कुतर रही है। इसलिए अपृश्यता के विरुद्ध हमारा आक्रमण इस ऊंच-नीच की भावना के विरुद्ध ही है।"

[वाद्य ध्वनि]

उद्घोषक : गांधीजी ने भारतीय समाज से उस कलंक को मिटाने के लिए अपना स्वर ही ऊंचा नहीं किया, उसके लिए ठोस कदम भी उठाये। उन्होंने अछूतों को 'हरिजनों' की संज्ञा से विभूषित किया, अपने पत्रों का नाम 'हरिजन' रखा और अस्पृश्यता-निवारण आन्दोलन को अधिक शक्तिशाली तथा पवित्र बनाने के लिए २१ दिन का उपवास किया। उनके उपवास और बाद में नौ महीने के उनके देशव्यापी प्रवास के फलस्वरूप सवर्णों की आंखें खुलीं। स्थान-स्थान पर मन्दिर, धर्मशालाएं, कुंए हरिजनों के लिए खुले। हरिजन-सेवा के काम के लिए लाखों रुपये लोगों ने गांधीजी की झोली में डाले, लेकिन कुछ प्रतिक्रियावादी सनातनियों ने उनका भारी विरोध किया।

पुरुष-स्वर १ : पूना में किसी धर्मान्ध ने उनकी मोटर पर बम फेंकने का प्रयास किया, लेकिन दैवयोग से गांधीजी उस मोटर में नहीं थे।

पुरुष-स्वर २ : वैद्यनाथधाम के समीप जसीडीह स्टेशन पर

कुछ पंडों ने उनकी मोटर पर लाठियां बरसायीं, लेकिन भगवान् की कृपा से उनके चोट नहीं आयी।

स्त्री-स्वर : काशी के एक सवर्ण ने अपनी टोली लेकर उनके कार्यों में सब प्रकार की बाधाएं डालीं।

पुरुष-स्वर १ : गांधीजी ने एक हरिजन-कन्या को अपने आश्रम में रखा, जिससे उन्हें बड़े भारी तूफान का सामना करना पड़ा !…

[दुःखसूचक वाद्य-ध्वनि]

उद्घोषक : लेकिन वह महापुरुष अपने रास्ते से तनिक भी विचलित न हुआ। सवर्णों के अन्तर्पट खोलने के लिए वह सारे देश में घूमे, कहीं-कहीं तो उन्होंने पैदल यात्रा भी की। उनकी और सेवा-व्रती ठक्कर बापा आदि की साधना से बहुत-से सवर्णों का विवेक जागृत हुआ, उनका अज्ञान और अभिमान कुछ अंशों में दूर हुआ, साथ ही हरिजनों में मानवोचित अधिकारों के लिए चेतना उत्पन्न हुई। गांधीजी की प्रार्थना-सभा के गंभीर वायुमण्डल में ये स्वर मुखरित होते रहते थे :

कई स्वर : **रघुपति राघव राजा राम।**
पतित पावन सीता राम ॥
मानव-मानव एक समान।
सबको सन्मति दे भगवान ॥

भेदभाव का रहे न नाम।
बने प्रेम का भारत धाम ॥

सजे सुमति का सारा साज ।
उतरे भू पर तेरा राज ॥

रघुपति राघव राजा राम ।
पतित पावन सीता राम ॥

[वाद्य-ध्वनि]

उद्घोषक : हरिजनों को उनका उचित दर्जा और गौरव दिलाने के लिए गांधीजी स्वयं हरिजन बने, मैला हटाने और सफाई करने आदि के काम उन्होंने स्वयं अपने हाथों किये और अपने साथियों से करवाये। उन्होंने उन मन्दिरों में जाने से इनकार कर दिया, जिनमें हरिजनों के प्रवेश पर प्रतिबन्ध था। उन्होंने तो यहां तक कहा :

गांधीजी : "मैं फिर जन्म लेना नहीं चाहता, पर अगर मेरा पुनर्जन्म हो तो अछूत जाति में पैदा होना चाहूंगा, ताकि मैं उनके दुःखों का साथी बनूं, उनके कष्टों को भोगूं और उनकी दुःखमय अवस्था से उनके उद्धार का यत्न करूं।"

पुरुष-स्वर २ : उनकी तपस्या ने लोगों को छुआछूत की बुराई के साथ लड़ने और समाज में व्याप्त ऊंच-नीच और छोटे-बड़े की दूषित मनोवृत्ति को दूर करने के लिए सजग और सचेष्ट बनाया।

स्त्री-स्वर : उन्होंने समाज का ध्यान इस बुनियादी सचाई पर केन्द्रीभूत किया कि श्रम पूजा है और छोटी-से-छोटी सेवा का भी उतना ही महत्त्व है, जितना बड़ी-से-बड़ी सेवा का।

पुरुष-स्वर १ : उन्होंने यह भी बताया कि सेवा का काम करके

कोई भी इंसान अछूत नहीं बनता। आदमी अछूत बनता है अपने कषायों* से, अपने दोषों से, अपनी बुराइयों से।

पुरुष-स्वर २ : देश के आजाद होने के बाद अब तो कानून ने भी घोषित कर दिया है कि छुआछूत अपराध है और उसके अपराधी के लिए दण्ड का विधान है।

[वाद्य-ध्वनि]

समवेत-स्वर : सब जन एक समान,
सब में एक प्राण।
हरि के गीत गाओ,
हरि के गीत गाओ॥
सब जन एक समान
सब में एक प्राण, एक प्राण।

उद्घोषक : प्राचीनकाल से लेकर अबतक हमारे ऋषियों ने, सन्तों ने, महापुरुषों ने एक ही बात कही है—इस संसार में सबकुछ नश्वर है। यदि कुछ शाश्वत है तो वह है प्रेम, और प्रेम ही परमेश्वर है।

[आशासूचक वाद्य-ध्वनि के साथ समाप्त] ●

---

* क्रोध, मान, माया और लोभ—इन चारों को कषाय कहते हैं। कषाय वह, जो आत्मा को कषे, क्लेश पहुंचाये।

९ : परित्राणाय साधूनाम्

[धीमी-धीमी वाद्य-ध्वनि। उसके समाप्त होते-होते]

स्त्री-स्वर : (लयपूर्वक) **परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम्।**
धर्मसंस्थापनार्थाय सम्भवामि युगे युगे।

पुरुष-स्वर : (गंभीरता से) **साधूनां परित्राणाय...च दुष्कृताम् विनाशाय...धर्मसंस्थापनार्थाय। सम्भवामि युगे युगे...।**

[हलकी वाद्य-ध्वनि : रुकते-रुकते]

उद्घोषक : कितनी उदात्त, कितनी महान् है गीता की यह वाणी! कितना आशाप्रद है इसका संदेश। (कुछ रुककर) साधु पुरुषों का उद्धार करने के लिए, दूषित कर्म करनेवालों का नाश करने के लिए और धर्म की स्थापना के लिए मैं युग-युग में प्रकट होता हूं।

[वाद्य-ध्वनि—उसके मन्द पड़ने पर]

ऐसी ही एक दिव्यज्योति आज से सौ वर्ष पूर्व हमारे देश की इस पावन भूमि पर अवतरित हुई थी। बड़े संकट का समय था वह। देश

दासता की श्रृंखलाओं में जकड़ा था, विदेशी सत्ता ने उसकी चेतना को निष्क्रिय बना दिया था, धर्म की हानि हो रही थी, जिस संस्कृति ने एक दिन विश्व को अपनी ओर आकृष्ट किया था, वह निस्तेज हो गयी थी। ऐसे विषम काल में अंधकार को चीरती प्रकाश की एक किरण फूटी।

स्त्री-स्वर : उसने देश को सोते से जगाया।

पुरुष-स्वर : उसने देशवासियों की जड़ता को दूर किया।

स्त्री-स्वर : उसने समाज और राष्ट्र को संगठित रूप से काम करना सिखाया।

पुरुष-स्वर : उसने प्रत्येक क्षेत्र में नीति का समावेश करवाया।

स्त्री-स्वर : उसने हमें प्यार करने की सीख दी।

पुरुष-स्वर : उसने हमें जीने की कला बतायी।

स्त्री-स्वर : उसने हमें आजादी दिलवायी।

पुरुष-स्वर : उसने इस भूमि पर राम-राज्य स्थापित करने का प्रयत्न किया।

उद्घोषक : वह ज्योति, वह किरण थी मोहनदास करमचन्द गांधी, हम सबके बापू, हमारे राष्ट्रपिता। वह जन्मे गुजरात के एक छोटे-से नगर पोरबन्दर में, लेकिन अपनी सेवाओं के बल पर अपने देश के ही नहीं, सारे संसार के बन गये। उनका कार्यक्षेत्र मुख्यत: भारत था, लेकिन उनकी दृष्टि इतनी व्यापक और उनका हृदय इतना विशाल था कि उनके लिए कोई भी पराया नहीं था।

स्त्री-स्वर : उनकी करुणा सबके लिए थी।

पुरुष-स्वर : उनका प्रेम मानव मानव के बीच कोई भेद स्वीकार नहीं कर सकता था।

स्त्री-स्वर : उनके जीवन का एक ही उद्देश्य था : संसार के सारी प्राणी सुखी हों, सब एक-दूसरे को प्यार करें और सब अपने लिए नहीं, दूसरों के लिए जियें।

पुरुष-स्वर : वह कहा करते थे—"हर एक धर्म पुकार-पुकार कर कहता है कि प्रेम से ही यह जगत् बंधा हुआ है। विद्वान् लोग सिखाते हैं कि यदि प्रेम का बन्धन न हो तो पृथ्वी का एक-एक परमाणु अलग-अलग हो जाय और पानी में भी यदि स्नेह न हो तो उसका एक-एक बिन्दु बिखर जाय। इसी प्रकार यदि मनुष्य मनुष्य के बीच प्रेम नहीं होगा तो हम मृतप्राय ही होंगे।"

[वाद्य-ध्वनि : समाप्त होने पर]

स्त्री-स्वर : वह मानव की कमजोरियों को जानते थे।

पुरुष-स्वर : पर वह यह भी मानते थे कि कोई भी व्यक्ति मूलतः बुरा नहीं है।

स्त्री-स्वर : तभी तो वह बुराई से घृणा करते थे, बुराई करनेवाले से नहीं।

उद्घोषक : उनकी सबसे बड़ी विशेषता यह थी कि उनकी क़थनी और करनी में अन्तर नहीं था। उनकी अहर्निश एक ही प्रार्थना रहती थी :

गूंज : **असतो मा सद्गमय।**
तमसो मा ज्योतिर्गमय।
मृत्योर्माऽमृतं गमय।

[थोड़ा विराम]

पुरुष-स्वर : हे प्रभो ! मुझे असत्य से सत्य की ओर ले चलो, अंधकार से प्रकाश की ओर और मृत्यु से अमरता की ओर।

उद्घोषक : यह उनके लिए केवल प्रार्थना नहीं थी, उनके जीवन का मूलमंत्र थी। वह प्रभु के प्रति समर्पित थे। छोटा-बड़ा हर काम उसी का मानकर करते थे। उन्होंने अपने को इतना तपाया कि कंचन बन गये। दूसरों के प्रति वह सदा उदार रहे, लेकिन अपनी कमियों को उन्होंने कभी क्षमा नहीं किया। उनका हृदय अत्यन्त संवेदनशील था। कहीं से भी कराह आती थी, तो वह विचलित हो उठते थे। किसी की भी आंखों में आंसू देखते थे तो उनकी आंखें भर आती थीं। वह सच्चे अर्थों में वैष्णवजन थे।

[वाद्य-ध्वनि। उसके थमते-थमते]

स्त्री-स्वर : (लय के साथ)

वैष्णवजन तो तेने कहिए जे पीड़ पराई जाणे रे।
परदुःखे उपकार करे तोय, मन अभिमान न आणे रे॥
सकल लोकमां सहुने वंदे निन्दा न करे केनी रे।
वाच काछ मन निश्चछल राखे, धन-धन जननी तेनी रे॥
समदृष्टि ने तृष्णा त्यागी, पर-स्त्री जेने मात रे।
जिह्वा थकी असत्य न बोले, परधन नव घाले हाथ रे॥
मोह माया व्यापे नहिं जेने, दृढ़ वैराग्य जेना मनमां रे।
रामनामशुं ताली लागी, सकल तीरथ तेना तनमां रे॥
वण लोभी ने कपट-रहित छे, काम-क्रोध निवार्‍या रे।
भणे नरसैंयो तेनु दरसन करतां, कुलएकोतेर तार्‍या रे॥

उद्घोषक : यह थी उनकी 'स्व' और पर की कल्पना।

वस्तुतः मानव उनके लिए सर्वोपरि था। उनका दृढ़ विश्वास था कि समाज की मूलभूत इकाई मनुष्य है। यदि उसका जीवन शुद्ध हो जायगा तो समाज अपने-आप ऊंचा उठ जायगा। मानव-जीवन की शुचिता के लिए उन्होंने अपने आश्रम के सत्य, अहिंसा, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह आदि ग्यारह व्रतों के पालन का आग्रह रखा। प्रार्थना तो जैसे उनके जीवन का अभिन्न अंग थी। वह कहा करते थे :

गांधीजी : "प्रार्थना या भजन जीभ से नहीं, हृदय से होता है। इसीसे गूंगे, तुतले और मूढ़ भी प्रार्थना कर सकते हैं। जीभ पर अमृत हो और हृदय में हलाहल, तो जीभ का अमृत किस काम का! कागज के गुलाब से सुगंध कैसे निकल सकती है?"

पुरुष-स्वर २ : भगवान् में उनकी अटूट श्रद्धा थी, पर उनके भगवान् मंदिरों में प्रतिष्ठित भगवान् न थे।

स्त्री-स्वर : वह कहा करते थे :

गांधीजी : "मेरा ईश्वर तो मेरा सत्य और प्रेम है। नीति और सदाचार ईश्वर है, निर्भयता ईश्वर है। ईश्वर जीवन और प्रकाश का मूल है, फिर भी वह इन सबसे परे है। ईश्वर अंतरात्मा ही है। वह तो नास्तिकों की नास्तिकता भी है, क्योंकि वह अपने अमर्यादित प्रेम से उन्हें भी जीवित रहने देता है। वह हृदय से देखनेवाला है। वह बुद्धि और वाणी से परे है।"

[वाद्य-ध्वनि]

पुरुष-स्वर : आत्म-शोधन में व्रतों का महत्त्वपूर्ण स्थान होता

है। अपने व्रतों में उन्होंने सत्य को सबसे ऊंचा माना।

स्त्री-स्वर : उन्होंने सत्य को परमेश्वर की संज्ञा से विभूषित किया।

पुरुष-स्वर : सत्य की महिमा का बखान करते हुए उन्होंने लिखा है :

गांधीजी : "जो सत्य को जानता है, मन से, वचन से और काया से सत्य का आचरण करता है, वह परमेश्वर को पहचानता है। इससे वह त्रिकालदर्शी हो जाता है, उसे इसी देह में मुक्ति प्राप्त हो जाती है।"

स्वर-स्वर : उन्होंने यह भी कहा :

गांधीजी : "सत्य एक विशाल वृक्ष है। उसकी ज्यों-ज्यों सेवा की जाती है, त्यों-त्यों उसमें अनेक फल आते हुए दिखायी देते हैं। उनका अंत ही नहीं होता। ज्यों-ज्यों हम गहरे पंठते हैं, उसमें से रस निकलते हैं, सेवा के अवसर हाथ आते रहते हैं।"

पुरुष-स्वर : उन्होंने अहिंसा पर भी बड़ा जोर दिया। उनका विश्वास था कि अहिंसा सत्य की प्राण है। अहिंसा ही सत्येश्वर का दर्शन करने का सीधा और छोटा मार्ग है।

स्त्री-स्वर : पर उनकी अहिंसा निर्बलों की अहिंसा नहीं थी, वीरों की अहिंसा थी।

पुरुष-स्वर : उसे वह क्षत्रिय का धर्म मानते थे। कहते थे :

गांधीजी : "जो डरकर हिंसा नहीं करता, वह तो हिंसा कर ही चुका। हा बिल्ली के प्रति चूअहिंसक नहीं,

उसका मन तो निरंतर बिल्ली की हिंसा करता रहता है, निर्बल होने के कारण वह बिल्ली को मार नहीं सकता। हिंसा करने की पूरी सामर्थ्य रखते हुए भी जो हिंसा नहीं करता, वह अहिंसा-धर्म का पालन करने में समर्थ होता है। जो मनुष्य स्वेच्छा से और प्रेमभाव से किसी की हिंसा नहीं करता, वही अहिंसा-धर्म का पालन करता है।"

उद्घोषक : उनके लिए अहिंसा का अर्थ था—प्रेम, दया, क्षमा। दक्षिण अफ्रीका में एक पठान ने उन पर घातक आक्रमण किया, उन्हें इतना पीटा इतना पीटा कि वह मरणासन्न हो गये, लेकिन होश आने पर उन्होंने आग्रह किया कि उसको कोई दण्ड नहीं मिलना चाहिए और उन्होंने उसे दण्ड नहीं मिलने दिया।

स्त्री-स्वर : उनकी अहिंसा मनुष्यों तक ही सीमित नहीं थी। समस्त जीवधारियों तक व्याप्त थी। अपने आश्रम में उन्होंने नियम बना रखा था कि किसी भी जीव की हत्या न की जाय, यहां तक कि विषैले सांप-बिच्छू आदि की भी नहीं।

पुरुष-स्वर : उनकी अहिंसा वास्तव में बेजोड़ थी। उनकी करुणा का पार न था।

स्त्री-स्वर : उनकी पग-पग पर परीक्षा हुई, लेकिन वह चट्टान की तरह अडिग रहे।

पुरुष-स्वर : उनकी तेजस्विता दिन-दूनी रात-चौगुनी होती गयी।

स्त्री-स्वर : कितनी शक्तिशाली थी इस देश में अंग्रेजों की

हुकूमत। उसके पास फौजें थीं, संहारक अस्त्र थे। बाहरी बल के सभी साधन थे, लेकिन गांधीजी के आत्मिक बल के आगे उनकी एक न चली।

पुरुष-स्वर : गांधीजी के अस्त्र भी तो विलक्षण थे—सत्याग्रह, उपवास, असहयोग आदि-आदि। इनका प्रयोग वह इस प्रकार करते थे कि बड़ी-से-बड़ी भौतिक शक्ति भी दहल उठती थी।

[आनंद-सूचक वाद्य ध्वनि]

स्त्री-स्वर : उनके हृदय में सबके लिए गहरी सद्भावना रहती थी। वह जिससे लड़ते थे, उसके लिए भी उनके हृदय में प्यार ही होता था।

पुरुष-स्वर : उन्होंने अंग्रेजी हुकूमत से मोर्चा लिया, लेकिन अंग्रेजी के प्रति कभी अपने मन में या व्यवहार में कटुता नहीं आने दी।

स्त्री-स्वर : वे मानते थे कि कोई भी व्यक्ति खुशी से बुराई नहीं करता। परिस्थितियां उसे वैसा करने के लिए विवश कर देती हैं।

उद्घोषक : दूसरों की भूलों के लिए वह स्वयं प्रायश्चित्त करते थे। दो व्यक्तियों की कमजोरी सामने आने पर उन्होंने पहली बार दक्षिण अफ्रीका में उपवास किया था। उन्होंने कहा था कि जिस आश्रम का संचालन वह करते हों, उसमें ऐसी बात का होना उनकी अपूर्णता को प्रकट करता है। आत्म-पीड़न तथा आत्म-शोधन के इस हथियार का बाद में उन्होंने बहुत-से अवसरों पर इस्तेमाल किया। कई बार तो उनका

जीवन ही खतरे में पड़ गया लेकिन प्रभु के हाथों में अपने को सौंपकर वह निश्चिन्त रहे।

[वाद्य ध्वनि]

स्त्री-स्वर : अपने देश की संस्कृति को वह बड़े आदर की दृष्ट से देखते थे।

पुरुष-स्वर : वह कहा करते थे :

गांधीजी : "दुनिया में किसी संस्कृति का भण्डार इतना भरा-पूरा नहीं है, जितना हमारी संस्कृति का है। जिस तरह गंगा में अनेक नदियां आकर मिली हैं, उसी प्रकार इस देश की संस्कृतिरूपी गंगा में भी अनेक संस्कृतियों की सहायक नदियां आकर मिली हैं।"

पुरुष-स्वर : वह यह भी कहते थे :

गांधीजी : "इन सबका कोई सन्देश हमारे लिए हो सकता है तो यही कि हम सारी दुनिया को अपनाएं, किसी को भी अपना दुश्मन न समझें।"

पुरुष-स्वर : संसार की सभी संस्कृतियों, सभी धर्मों, के प्रति उनकी दृष्टि समान आदर की थी।

स्त्री-स्वर : वह उन्हें मिलाकर एक करने के पक्षपाती नहीं थे।

पुरुष-स्वर : उनके लिए हर फूल का महत्त्व था।

स्त्री-स्वर : वह अनेकता में एकता के पोषक थे।

उद्घोषक : वह कहा करते थे कि मैं इस डर से अपने घर की खिड़कियां और किवाड़ें बन्द नहीं करूंगा कि बाहरी हवा अन्दर आयेगी। मैं उसे अच्छी तरह से आने दूंगा। लेकिन मैं अपने पैर इतने मजबूत

बनाये रखूंगा कि वह हवा उन्हें उखाड़ न सके। उन्होंने संसार की सारी संस्कृतियों को आदर-भाव से देखा, सारे धर्मों के प्रति समभाव रखा।

स्त्री-स्वर : उनके लिए धर्म का अर्थ मन्दिर की दीवारों में आबद्ध धर्म नहीं था। वह उस धर्म को मानते थे, जो जीवन को धारण करता है।

पुरुष-स्वर : इसलिए उन्होंने खरे मानव को सदा प्रतिष्ठा दी।

स्त्री-स्वर : उन्होंने धन के स्थान पर श्रम को बिठाया।

पुरुष-स्वर : उन्होंने मनुष्य को पद से बड़ा माना और राज-नीति को सदैव मानव-नीति के अधीन रखा।

उद्घोषक : उन्होंने अपने देश की स्वाधीनता के लिए भारी संघर्ष किया, लेकिन स्वराज्य की उनकी कल्पना में शुद्ध-बुद्ध मानव का निर्माण ही प्रमुख रहा। उनकी स्वराज्य की परिभाषा थी 'स्व' अर्थात् अपने पर 'राज्य'। वह कहा करते थे कि जिसने अपने को जीत लिया, उसने जग को जीत लिया।

स्त्री-स्वर : उन्होंने देख लिया था कि विदेशी सत्ता के पैरों में पड़ा अवनत भारत कराहती मानवता को आशा का सन्देश नहीं दे सकता, उसकी पीड़ा को दूर नहीं कर सकता, इसीलिए उन्होंने उसे स्वतंत्र कराने की ठानी।

पुरुष-स्वर : उन्होंने जहां भी दुर्बलता देखी, उसे हटाने का प्रयास किया।

स्त्री-स्वर : उन्होंने दलितों को उठाया, हरिजनों को गले लगाया।

पुरुष-स्वर : उन्होंने ऊंच-नीच की दीवारें तोड़ीं।

स्त्री-स्वर : उन्होंने साम्प्रदायिकता पर प्रहार किया।

पुरुष-स्वर : उन्होंने स्त्रियों में साहस भरा।

स्त्री-स्वर : देश की बुनियाद को पक्का करने के लिए उन्होंने रचनात्मक कार्यों का जाल सर्वत्र फैलाया।

पुरुष-स्वर : उन्होंने विज्ञान को स्वीकार किया, लेकिन उसी हद तक कि वह मानव-श्रम को अकारथ न करे।

उद्घोषक : उन्होंने कोई भी क्षेत्र नहीं छोड़ा। देश के सर्वांगीण विकास के लिए उन्होंने कोटि-कोटि नर-नारियों के पुरुषार्थ को जागृत किया। देश में लोक-शक्ति का उदय हुआ। उसके आगे विदेशी सत्ता ठहर नहीं सकती थी। गुलामी की जंजीरें टूटीं। फिर भी उन्होंने यह नहीं माना कि उनकी मंजिल आ गयी। उन्होंने कहा: "जबतक एक भी आंख में आंसू है, मेरे संघर्ष का अन्त नहीं हो सकता।"

स्त्री-स्वर : उन्होंने मानवता के दु:ख-दर्द के साथ अपने को का एकाकार कर दिया।

पुरुष-स्वर : संसार के किसी भी कोने में वह पीड़ा को सहन नहीं कर सकते थे। उनकी एक ही कामना थी: जगत् के सभी प्राणी एक बड़े कुटुम्ब की भांति प्रेम से रहें। न कोई किसी का शोषण करे, न अपना होने दे।

स्त्री-स्वर : न अन्याय-अत्याचार के आगे झुके, न किसी को झुकाये ।

पुरुष-स्वर : वह दरिद्रनारायण के प्रतिनिधि बने ।

स्त्री-स्वर : वह हर घड़ी भगवान् के सान्निध्य में रहते थे । उनकी प्रार्थना-सभा में उनके अंतर की कामना इन शब्दों में गूंज उठती थी :

पुरुष-स्वर : (सस्वर पाठ)

प्रभु तुम हरो जन की भीर ।
द्रौपदी की लाज राखी, तुम बढ़ायो चीर ।
भक्त कारण रूप नरहरि, धर्यो आप शरीर ।
हरिनकश्यप मार लीन्हों, धर्यो नाहिन धीर ।
बूड़ते गजराज राख्यो, कियो बाहर नीर ।
दास मीरां लाल गिरधर, दुःख जहां तहां पीर ॥

[वाद्य-ध्वनि]

उद्घोषक : भारत-भूमि बड़ी सौभाग्यशाली है, जिसने ऐसी विभूति को जन्म दिया । उन्होंने अपनी वाणी और अपने कर्म से संसार के समक्ष ऐसे आदर्श प्रस्तुत किये, जो मानव-जाति का युग-युग तक मार्ग-दर्शन करते रहेंगे ।

['रघुपति राघव राजा राम' की वाद्य-ध्वनि के साथ समाप्त] ०

१० : बढ़ते कदम

[प्रारंभिक संगीत की पृष्ठभूमि में बहुत-से कदमों के एक साथ बढ़ने का आभास]

उद्‌घोषक : (उल्लाससूचक स्वर में) बढ़ते कदम ! बढ़ते कदम ! ये कदम सूचक हैं देश के उस हौसले के, जिसके कारण लोकजीवन के हर क्षेत्र में आज प्रगति होती दिखायी दे रही है। इस प्रगति में बिना किसी भेद-भाव के सब शामिल हैं। जब से हमारा देश आजाद हुआ है, तब से सारे देशवासी तत्पर हो उठे हैं कि इस अभियान में कोई भी पीछे न रहे। पीछे रहने से जो देश की हानि हुई है, उसे वे अच्छी तरह से देख और भुगत चुके हैं। कुछ भाई पिछड़े रहे तो आखिर उसमें दोष हमलोगों का ही था। हमने अपनी ऊंच-नीच की भावना के कारण हरिजनों और आदिम जातियों को अपने से अलग कर दिया और उनके साथ अमानुषिक व्यवहार उसकी तीव्र वेदना आजादी की

आरम्भ में ही हमारे नेताओं ने, विशेषकर गांधीजी ने, अनुभव की।

[प्रार्थना के वातावरण की द्योतक वाद्य-ध्वनि, थोड़ी देर तक उतार-चढ़ाव। अनन्तर एक या कई व्यक्ति मिलाकर गायें]

सस्वर : वैष्णवजन तो तेने कहीए जे पीड़ पराई जाणे रे। परदुःखे उपकार करे तोये, मन अभिमान न आणे रे॥

[वाद्य-ध्वनि]

उद्घोषक : (**गंभीर स्वर में**) कितनी ऊंची कल्पना है श्रेष्ठ मानव की! (**थोड़ा रुककर**) वैष्णवजन तो तेने कहीए (**तनिक विराम**) जे पीड़ पराई जाणे रे। (**हलकी वाद्य-ध्वनि, फिर थोड़ी निस्तब्धता**)पर दुःखे उपकार करे तोये...(**थोड़ा विराम**) मन अभिमान न आणे रे। इस भजन के एक-एक शब्द में मानो भारतीय संस्कृति की, मानवता की, मूल आत्मा समायी हुई है। कोई भी मनुष्य धर्म या जात से ऊंचा नहीं बनता। वैष्णव जन तो वह है, जो दूसरों की पीड़ा को अनुभव करता है, जिसके हृदय में औरों की व्यथा स्पन्दित होती है, जो किसी के भी दुःख-दर्द को सहन नहीं कर सकता, उसे दूर करने के लिए तत्काल दौड़ पड़ता है और इतना करके भी जिसके मन में अभिमान पैदा नहीं होता।

[हर्षसूचक वाद्य-ध्वनि, उसके धीमे पड़ते-पड़ते]

स्त्री-स्वर : बात वास्तव में सही है। जन्म से कौन नीच और कौन ऊंचा होता है? सबका जन्म एक ही तरह होता है। सबके शरीर हाड़-मांस के होते हैं और

सबकी धमनियों में एक ही प्रकार का रक्त प्रवाहित होता है।

पुरुष-स्वर १ : प्रकृति ने भी सारे प्राणियों को एक-सी सुविधाएं दी हैं।

स्त्री-स्वर : आदमी अपने गुणों से ऊंचा उठता है, अपनी करनी से बड़ा बनता है, लेकिन...लेकिन...

[अन्यायबोधक वाद्य-ध्वनि, उसके समाप्त होते ही]

ब्राह्मण : (आवेश में) नहीं-नहीं, मैं अपने कुंए पर ढेड़-चमारों को हरगिज-हरगिज नहीं चढ़ने दूंगा। यह कुंआ मेरा है, मेरे घर का है, मेरे बाबा का खुदवाया हुआ है।

हरिजन : (दयनीय वाणी में) मालिक, हम क्या करें। हम-लोग पानी के लिए तरस रहे हैं!

ब्राह्मण : (कठोर स्वर में) तरस रहे हैं तो हम क्या करें!

हरिजन : (गिड़गिड़ा कर) महाराज थोड़ा-सा पानी दे दीजिये।

ब्राह्मण : नहीं-नहीं, मेरे इस कुंए से मन्दिर का पानी जाता है।

[सिसकी की आवाज, वाद्य-ध्वनि से चीत्कार का बोध]

उद्घोषक : देखा आपने, यह था समाज का चित्र, एक समान होते हुए भी, मनुष्य द्वारा पैदा किये हुए भेद-भाव का एक नमूना। किसी जमाने में काम-काज की सुविधा के लिए मानव ने चार वर्ण बनाये थे, लेकिन आगे चलकर वही समाज के लिए बंधन बन गये। ऊंच-नीच की उन्होंने दीवारें खड़ी कर दीं, सबकी सेवा करनेवाले अछूत माने जाने लगे और सवर्णों द्वारा उनका

तिरस्कार होने लगा। वे मानवोचित अधिकारों से वंचित हो गये, उनकी अवस्था दीन-हीन हो गयी। लेकिन हमारे संतों ने, हमारे ऋषियों ने, हमारे महापुरुषों ने कभी इस ऊंच-नीच के भेद को स्वीकार नहीं किया। हमारे धर्म-ग्रन्थों ने उसकी भर्त्सना की।

[वाद्य-ध्वनि, उसके मन्द पड़ते ही]

पुरुष-स्वर १ : स्वामी विवेकानन्द ने कहा—"जो धर्म गरीबों का, पीड़ितों का, दुःख नहीं मिटाता, मनुष्य को देवता नहीं बनाता, वह भी क्या कोई धर्म है? जो जाति दूसरों से घृणा करती है, वह जीवित नहीं रह सकती।"

पुरुष-स्वर २ : रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने कहा—"जो धर्म मानव को अपमानित करता है, वह मिथ्या है। मनुष्य जहां कहीं भी मनुष्य को सतायेगा, वहीं उसकी सारी की-सारी मानवता घायल होगी और वह घाव उसे मृत्यु की ओर घसीट ले जायगा।"

पुरुष-स्वर १ : लोकमान्य तिलक ने कहा—"अस्पृश्यता एक ऐसी रूढ़ि है, जिसका नाश होना ही चाहिए। जो अस्पृश्यता मरने पर नहीं रहती, जो परमेश्वर के घर जाने में रुकावट नहीं डालती, उसे अपने समाज में चलने देना परमेश्वर के प्रति पाप करने जैसा है।

पुरुष-स्वर १ : और आचार्य विनोवाजी ने वड़े पते की वात कही:

विनोवा : "क्या कोई ब्राह्मण मरता है तो उसका सोना होता है और हरिजन मरता है तो उसका लोहा होता है? आखिर सवकी खाक ही होती

है। हरिजन-परिजन का यह भेद तनिक भी नहीं रहना चाहिए।"

[वाद्य-ध्वनि]

उद्घोषक : और इस महाव्याधि पर सबसे अधिक तीव्र प्रहार किया हमारे राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने। जब उन्होंने देखा कि देश के सात करोड़ निवासी धार्मिक, सामाजिक तथा आर्थिक दृष्टि से भयंकर स्थिति का सामना कर रहे हैं, उनकी आत्मा तिलमिला उठी। उन्होंने कहा :

गांधीजी : "जो धर्म अस्पृश्यता को मानता है, उसके अनुसार व्यवहार करता है, वह धर्म नहीं, अधर्म है और नाश के योग्य है। अस्पृश्यता हिन्दू-धर्म का अंग नहीं, बल्कि हिन्दू-धर्म में घुसी हुई सड़न है, वहम है, पाप है।"

पुरुष-स्वर : आगे उन्होंने यहां तक कहा :

गांधीजी : "मैं फिर जन्म लेना नहीं चाहता, पर अगर मेरा पुनर्जन्म हो तो मैं अछूत जातियों में पैदा होना चाहूंगा, जिससे मैं उनके दुःखों का साथी बन सकूं, उनके कष्टों और अपमानों को भोगूं और दुःखमय अवस्था से उनके उद्धार का यत्न करूं।"

[तीव्र वाद्य-ध्वनि]

पुरुष-स्वर १ : उन्होंने हिन्दू-समाज के इस कलंक को मिटाने के लिए इक्कीस दिन का उपवास किया।

पुरुष-स्वर २ : वह नौ महीने तक सारे देश में घूमे और लोक-चेतना को जागृत किया।

पुरुष-स्वर १ : उन्होंने अपने पत्रों का नाम 'हरिजन' रखा।

स्त्री-स्वर : और उन्होंने अपने को 'हरिजन' कहा।

पुरुष-स्वर २ : हरिजन-प्रवास में उनकी सभाओं में विघ्न डाले गये, उन पर लाठियां बरसायी गयीं, उनकी मोटर पर बम फेंकने का प्रयास किया गया, लेकिन वह अपने निश्चय से, अपने मार्ग से, तनिक भी विचलित नहीं हुए।

[आशा-बोधक वाद्य-ध्वनि]

उद्घोषक : सौभाग्य से उन्हें ठक्कर बापा जैसे सेवाव्रती और मानवता के अनन्य पुजारी मिल गये, जिन्होंने अपना सारा जीवन हरिजनों और दलितों के प्रति होनेवाले अमानुषी अन्याय और अत्याचार को मिटाने में लगा दिया। अपनी भारी-भरकम कमाई छोड़कर उन्होंने घोर तप आरम्भ किया। वह तप उनके जीवन के अन्तिम क्षण तक चलता रहा। सदियों से पिछड़े हुए, अपमानित तथा शोषित हरिजनों को ऊपर उठाने और समाज में उन्हें सम्मानपूर्ण स्थान दिलवाने के लिए इन दो महापुरुषों तथा उनके संगी-साथियों ने जो कठोर साधना और तपश्चर्या की, वह मानवता के इतिहास में चिरस्मरणीय रहेगी।

[वाद्य-ध्वनि]

पुरुष-स्वर १ : उनका महायज्ञ बहुत-कुछ अंशों में सफल हुआ।

पुरुष-स्वर २ : स्थान-स्थान पर मंदिरों के द्वार हरिजनों के लिए खुल गये।

पुरुष-स्वर १ : कुंए, तालाब और सड़कों का उपयोग उनके लिए सुलभ हुआ।

स्त्री-स्वर २ : समाज में एक नयी चेतना उत्पन्न हुई।

[वाद्य-ध्वनि]

बालक : मां, हम भंगी को क्यों नहीं छू सकते?

मां : क्योंकि वह मैला उठाता है।

बालक : तुम भी तो छोटे भैया की टट्टी साफ करती हो। तुम भी तो भंगिन हुई।

मां : (खीजकर) नहीं, मैं भंगिन नहीं हुई, भंगी साफ कहां रहता है?

बालक : साफ रहे तब भी तो हम उसे नहीं छू सकते। मां, यह बात समझ में नहीं आती।

[वाद्य-ध्वनि]

पुरुष-स्वर १ : मां बच्चे को नहलाती, धुलाती और साफ रखती है—बच्चा उसे प्रेम करता है।

पुरुष-स्वर २ : डॉक्टर रोगी के घावों को धोकर उसकी मरहम-पट्टी करता है। रोगी डॉक्टर का कृतज्ञ होता है।

स्त्री-स्वर १ : भंगी टट्टियां साफ करता है, नालियों की गन्दगी हटाता है, और हम उसे प्रेम की जगह घृणा करते हैं, उसे अछूत कहते हैं।

[वाद्य-ध्वनि के उतार-चढ़ाव]

उद्घोषक : देश में जब लोकप्रिय सरकारें बनीं तो उनका ध्यान विशेष रूप से इस ओर गया। हरिजनों का दर्जा ऊंचा हुआ, उन्हें अधिकार मिले। जब देश आजाद हुआ तो उस दिशा में बढ़ते चरणों को और भी गति मिली।

स्त्री-स्वर १ : अस्पृश्यता-निवारण के कार्य में हरिजन सेवक संघ, भारतीय दलित वर्ग संघ, भारत दलित

सेवक संघ, हरिजन आश्रम आदि-आदि संस्थाओं को अधिक बल प्राप्त हुआ है।

पुरुष-स्वर : १ इसके अतिरिक्त भारत के संविधान में अनुसूचित जातियों, अनुसूचित आदिम जातियों तथा अन्य पिछड़े वर्गों का शैक्षणिक और आर्थिक दृष्टि से उत्थान करने और उन पर लादी गयी परम्परागत सामाजिक असमर्थताओं का निराकरण करने के उद्देश्य से आवश्यक सुरक्षा तथा संरक्षण प्रदान करने की व्यवस्था की गयी।

स्त्री-स्वर १ : सन् १९५५ की १ जून से 'अस्पृश्यता (अपराध) अधिनियम' लागू हुआ।

पुरुष स्वर १ : उसके अंतर्गत अस्पृश्यता के आधार पर किसी भी व्यक्ति के सार्वजनिक उपासना-स्थल पर जाने और वहां उपासना करने तथा आम तालाब, कुंएआदि से पानी लेने पर रोक लगाना दंडनीय है।

पुरुष-स्वर २ : होटलों तथा चाय आदि की दूकानों पर हरिजन सबके समान भोजन और जलपान कर सकते हैं। धर्मशाला आदि स्थानों में सबके साथ ठहर सकते हैं और मनोरंजन के सभी स्थानों में आ-जा सकते हैं।

स्त्री-स्वर १ : अस्पतालों और शिक्षा-संस्थाओं में कोई किसी व्यक्ति के साथ भेद-भाव का व्यवहार नहीं कर सकता।

पुरुष-स्वर १ : छुआछूत के कारण कोई किसी का किसी भी तरह बहिष्कार नहीं कर सकता।

पुरुष-स्वर २ : जो ऐसे अपराध करेगा, उसे छह महीने की राजा अथवा पांच सौ रुपये तक के जुरमाने का दंड अथवा दोनों ही दिये जायंगे।

[हर्षसूचक वाद्य-ध्वनि]

उद्घोषक : इतना ही नहीं, संविधान के लागू होने के बाद से, सन् १९६० में दस वर्ष की अवधि के लिए अनुसूचित जातियों की जन-संख्या के आधार पर लोकसभा तथा राज्यों की विधान-सभाओं में स्थान सुरक्षित रखे गये। अब यह अवधि आगे के लिए और बढ़ा दी गयी है। सरकारी नौकरियों में उन्हें सुविधाएं दी गयी हैं।

स्त्री-स्वर १ : उनके हित के लिए परिषदें तथा बोर्ड स्थापित किये गए हैं।

पुरुष-स्वर १ : शिक्षा के प्रसार के लिए अनेक स्कूल, छात्रा-वास तथा पुस्तकालय खुले हैं।

स्त्री-स्वर २ : आर्थिक उन्नति के लिए जमीन, खेती-बारी के प्रसाधन, उद्योग-धंधे आदि की व्यवस्था की गयी है। इस कार्य के लिए विशेष रूप से एक आयुक्त की नियुक्ति हुई है।

पुरुष-स्वर १ : इन तथा ऐसे ही अन्य प्रयासों ने समाज की चेतना को प्रबुद्ध किया है।

पुरुष-स्वर २ : शिक्षा के प्रसार तथा आर्थिक विकास से हरिजन स्वयं जाग्रत हुए हैं।

स्त्री-स्वर : वे सम्मानपूर्वक जीने के लिए लालायित हो उठे हैं।

पुरुष-स्वर : अपमान के आगे न झुकने का उनमें साहस उत्पन्न हुआ है।

[आनन्दबोधक वाद्य-ध्वनि]

उद्घोषक : लीजिए, हरिजनों की बात करते-करते एक और महत्त्वपूर्ण समस्या का स्मरण हो आया और वह है आदिवासियों की। हमारे देश में आदिवासियों की संख्या लगभग सवा दो करोड़ है। वैसे तो वे सारे देश में फैले हुए हैं, लेकिन उनकी आबादी का बहुत बड़ा भाग असम, बिहार, महाराष्ट्र, गुजरात, उड़ीसा, मध्य-प्रदेश, पश्चिम बंगाल, मद्रास, राजस्थान आदि भागों में फैला हुआ है। ये लोग वनों में रहते हैं और देश की शेष आबादी से न केवल पृथक् हैं, बल्कि उनकी बहुत-सी बातें भिन्न हैं।

पुरुष-स्वर १ : वे जंगलों में अपने सीधे-सादे घर बनाकर रहते हैं।

पुरुष-स्वर २ : उनका रहन-सहन, उनके रीति-रिवाज बिलकुल अलग हैं।

स्त्री-स्वर : वे बड़े सरल हैं, स्नेहशील हैं, आपस में मिल-जुलकर काम करते हैं।

पुरुष-स्वर १ : वे बड़े संतोषी हैं। खेतीबारी से उन्हें जो कुछ मिल जाता है, खा लेते हैं, कपड़े के नाम पर लाज ढंकने के लिए थोड़ा-सा टुकड़ा लपेट लेते हैं।

पुरुष-स्वर २ : अपनी आजादी उन्हें बहुत प्यारी है।

स्त्री-स्वर : उनकी अपनी कला है, उनकी अपनी संस्कृति है।

[आदिवासियों का कोई लोकगीत]

उद्घोषक : बड़े ही प्राणवान् लोग हैं वे। वनों की हरियाली, पक्षियों की चहचहाट, नदियों और झरनों का कलकल-निनाद उनके हृदय में मधुर संगीत की सृष्टि करता है। वे जनरव से दूर हैं, एकान्त में रहते हैं, लेकिन उनके अन्तर में वही स्पन्दन है, जो दूसरे लोगों के अन्दर है। वे पिछड़े हुए अवश्य कहलाते हैं, लेकिन उनकी अपनी परम्पराएं हैं, जो बड़ी ही मूल्यवान् हैं।

पुरुष-स्वर १ : पर वे शिक्षा में बहुत पिछड़े हुए हैं।

पुरुष-स्वर २ : वे अनेक अंधविश्वासों के शिकार हैं।

स्त्री-स्वर : उनमें बहुत-से रोग घर किये हुए हैं और उचित उपचार के अभाव में उनकी बड़ी हानि होती है।

पुरुष-स्वर १ : वे बाबा आदम के जमाने में रहते हैं और उन्हें इस बात का पता ही नहीं कि दुनिया में क्या हो रहा है।

पुरुष-स्वर २ : वे भयंकर पशुओं से नहीं डरते, लेकिन शहरी इंसान को देखकर उनकी रूह कांप उठती है।

स्त्री-स्वर : वनों में रहते-रहते मानो वे भूल गये हैं कि उनके अपने लोक से बाहर भी कोई दुनिया है, जिसमें उनके भाई बसते हैं।

उद्घोषक : ये वन-पुत्र भले ही भूल जायं, लेकिन मानवता को प्यार करनेवाला महापुरुष उन्हें कैसे भूल

सकता था? महात्मा गांधी को सारा देश जगाना था, उसे उठाना था, खड़ा करना था और एक सूत्र में बांधना था। वह कैसे सहन कर सकते थे कि देश के सवा दो करोड़ भाई समाज से कटकर अलग रहें, पिछड़े रहें और तेजी से बढ़ती दुनिया का उन्हें कुछ पता भी न न रहे?

पुरुष-स्वर १ : उन्हें बिना साथ लिये भारत का पूरा विकास कहां संभव था? आजादी का स्वप्न कहां पूर्ण होना था? गांधीजी की पैनी निगाह ने आदिवासियों के सवाल के महत्त्व को शुरू में ही देख लिया और स्वराज्य-प्राप्ति के अपने कार्यक्रम का उसे प्रमुख अंग बनाया। उन्होंने कहा था :

गांधीजी : "जबतक एक भी व्यक्ति पिछड़ा हुआ है, तब-तक हमारी स्वराज्य की मंजिल अपूर्ण रहेगी।"

पुरुष-स्वर २ : संयोग से उन्हें इस कार्य में अन्य निष्ठावान सह-योगी मिल गये और अछूतोद्धार के काम के शुरू होने के बाद कुछ ही समय में इस काम का भी श्रीगणेश हो गया।

पुरुष-स्वर १ : ठक्कर बापा ने इस कार्य को उसी लगन और निष्ठा से उठा लिया, जिस तरह हरिजन-कार्य को उठाया था।

स्त्री-स्वर : उन्होंने कहा :

ठक्कर बापा : "जो ईश्वर पक्षियों को घोंसला बनाने की बुद्धि देता है, वह हमें भी जंगल में जाने की बुद्धि देगा।"

पुरुष-स्वर २ : अपने निश्चय की दृढ़ता को व्यक्त करते हुए उन्होंने यहां तक कहा :

ठक्कर बापा : "मकान मिले तो अच्छा, नहीं तो बड़ के पेड़ के नीचे हमारी पाठशालाएं चलेंगी।"

पुरुष-स्वर २ : उन्होंने आदिवासियों की गरीबी, निरक्षरता, सामाजिक कुरीतियों आदि को दूर करने के लिए कमर कस ली और अपने जीवन की प्रत्येक सांस मानव मानव के बीच की खाई को पाटने के लिए अर्पित कर दी।

उद्घोषक : गांधीजी की मूल प्रेरणा और ठक्कर बापा के आह्वान पर देश के कोने-कोने से अनगिनत नर-नारी इस काम में जुट गये, देश के विभिन्न भागों में संस्थाएं बनीं और बड़ी तत्परता से इस दिशा में कार्य आरम्भ हुआ।

स्त्री-स्वर : पर यह काम आसान न था। आदिवासियों की आबादी ऐसे स्थानों पर थी, जहां जाने के लिए रास्ते नहीं थे और वहां पहुंचना बड़ा कठिन था। फिर जो लोग आदमी की शक्ल से भी घबराते थे, उन्हें अपनी ओर खींचना और भी मुश्किल था।

पुरुष-स्वर १ : लेकिन ठक्कर बापा और उनके संगी-साथियों की सेना तनिक भी नहीं घबरायी। ज्यों-ज्यों उनकी परीक्षा होती गयी, वे और तपते गये।

स्त्री-स्वर : विदेशी सत्ता ने इन आदिमजातियों को पृथक् करके रखने की नीति अपनायी थी। नतीजा यह हुआ था कि जमींदारों, साहूकारों तथा ठेकेदारों ने वहां पहुंचकर उनका शोषण

करना आरम्भ कर दिया। उसके विरुद्ध अनेक स्थानों पर आदिवासियों ने कई बार विद्रोह किया, लेकिन उन्हें दबा दिया गया।

पुरुष-स्वर २ : भारत के आजाद होने से पहले ब्रिटिश शासन ने उनकी स्थिति को जैसे-का-तैसा बनाये रखा।

पुरुष-स्वर १ : उनके बीच बहुत-से विदेशी मिशनरी काम करने गये। उनमें से बहुतों ने सराहनीय कार्य किया, लेकिन उनमें से अधिकांश ऐसे लोग थे, जिन्होंने ब्रिटिश नीति को पोषण देकर उनका धर्म-परिवर्तन करने के अपने प्रच्छन्न ध्येय की पूर्त्ति के लिए उन्हें अलग रखवाने में सहायता दी।

स्त्री-स्वर १ : पर इन विदेशी लोगों में कुछ ऐसे सदाशयी व्यक्ति भी थे, जो आदिवासियों को दिल से चाहते थे, उनकी कला और संस्कृति के परम उपासक थे और जिनकी हार्दिक इच्छा थी कि उन लोगों की अवस्था सुधरे और वे पिछड़े न रहकर शेष दुनिया के समान हों।

पुरुष-स्वर १ : कई ब्रिटिश अधिकारियों ने भी इस दिशा में अच्छा काम किया।

स्त्री-स्वर २ : देश में जब पहली बार लोकप्रिय सरकारें स्थापित हुईं, तो इस कार्य को अधिक गति मिली। इस कार्य में संलग्न संस्थाओं को प्रोत्सा-हन दिया गया।

उद्घोषक : इस प्रकार आदिमजातियों की स्थिति में सुधार का यह महत्त्वपूर्ण कार्य आगे बढ़ता गया। उन लोगों में शिक्षा का प्रचार किया गया। खेती-

बारी में सहायता दी गयी। उनको साहूकारों के चंगुल से निकालने का प्रयत्न किया गया। उनकी बस्तियों तक पहुंचने के लिए रास्ते बनाये गए। लेकिन इस दिशा में विशेष कदम उठे भारत के आजाद होने के बाद।

[वाद्य-ध्वनि]

पुरुष-स्वर २ : विभिन्न प्रान्तों में जो संस्थाएं काम कर रही थीं, उनको लेकर 'भारतीय आदिम जाति सेवक संघ' की स्थापना की गयी।

पुरुष-स्वर १ : भारतीय संविधान में स्वीकार किया गया कि आदिमजातियों के आर्थिक तथा शैक्षणिक हितों को संरक्षण दिया जाय।

स्त्री-स्वर : सरकारी नौकरियों में उनका विशेष ध्यान रखा गया।

पुरुष-स्वर २ : संसद् तथा राज्य विधान-मंडलों में उनके प्रतिनिधित्व की सुविधा की गयी।

पुरुष-स्वर १ : उनके कल्याण तथा हितों की सुरक्षा के उद्देश्यों से राज्यों में सलाहकार परिषदों तथा पृथक् विभागों की स्थापना की गयी।

स्त्री-स्वर : अनूसूचित या आदिम जातीय क्षेत्रों के प्रशासन तथा नियन्त्रण के लिए विशेष प्रबन्ध किया गया।

पुरुष-स्वर २ : संविधान में की गयी सुरक्षा-सम्बन्धी व्यवस्था की जांच-पड़ताल करने तथा उनको कार्यरूप में परिणत करने के सम्बन्ध में एक आयुक्त की नियुक्ति की गयी।

पुरुष-स्वर १ : विभिन्न राज्यों में 'कल्याण-विभाग' स्थापित किये गए।

स्त्री-स्वर १ : पहली पंचवर्षीय योजना में पिछड़े वर्ग के विकास कार्य के लिए लगभग २० करोड़ रुपये की व्यवस्था की गयी थी। दूसरी पंचवर्षीय योजना में इस कार्य के लिए लगभग ४४ करोड़ की राशि रखी गयी और तीसरी पंचवर्षीय योजना में आदिवासियों के लिए कोई ६१ करोड़ की और हरिजन विमुक्त जाति आदि को मिलाकर ११४ करोड़ की व्यवस्था रखी गयी। आगे इसमें और बढ़ोतरी की गयी।

पुरुष-स्वर २ : इस योजना के अनुसार आदिवासियों की आर्थिक उन्नति के लिए सरकारी समितियों का संगठन, भूमि-सुधार, बांध बांधना, उत्तम बीज तथा खेती के अच्छे औजार दिलाना, पशु-संवर्द्धन, कुटीर-उद्योग आदि की व्यवस्था की गयी।

पुरुष-स्वर १ : शिक्षा के लिए पाठशालाएं, छात्रावास आदि खोले गये, छात्रों को वजीफे दिये गए।

स्त्री-स्वर १ : चिकित्सा, यातायात आदि सभी क्षेत्रों में उनके बहुमुखी विकास के लिए प्रयत्न किये गए।

[आशासूचक वाद्य-ध्वनि]

उद्घोषक : इसमें कोई सन्देह नहीं कि गांधीजी तथा ठक्कर बापा ने जो बीज बोया था, वह उनके सेवा-परायण व्यक्तियों तथा शक्तियों के पोषण से लगातार बढ़ता जा रहा है। आदिवासियों में नयी जागृति उत्पन्न हुई है। आशा का संचार हुआ है। उनका सिमटा संसार व्यापक बना है। शिक्षा में उनकी रुचि बढ़ी है और अब उनके युवक और युवतियां उच्च शिक्षा प्राप्त कर

रहे हैं। उनमें से बहुत-से अपनी प्रतिभा से अपनी जाति का नाम ऊंचा कर रहे हैं। शिक्षा के प्रसार के साथ-साथ अब इन लोगों के अन्तर के पट भी खुलते जा रहे हैं।

[हल्की वाद्य-ध्वनि]

मुखिया : (ऊंचे स्वर में) नहीं-नहीं, तुम्हें अपने पिता का मरण-भोज करना पड़ेगा। बिना उसके तुम्हारी शुद्धि नहीं हो सकती। मृत आत्मा को शान्ति नहीं मिल सकती। हम ऐसा पाप नहीं होने देंगे।

भील : (करुण स्वर में) मुखियाजी, मैं बड़ा लाचार हूं। आपको क्या पता नहीं है कि अकाल में मेरी दोनों गायें मर गयीं। दुर्भाग्य से मेरा कुंआ भी ढह गया। मेरे पास अब एक कौड़ी भी नहीं है।

मुखिया : कौड़ी भी नहीं है तो हम क्या करें, जमीन गिरवी रखकर पैसा ले लो। मकान किसी को दे दो।

भील : नहीं मुखियाजी, मैं ऐसा नहीं कर सकता। मैं कर्ज़ नहीं ले सकता। कितनों को मैंने देखा है कि कर्ज लिया कि डूबे और मरे। नहीं-नहीं, यह मेरे बूते का नहीं है।

मुखिया : तुम देख लो, तुम्हारी मुसीबत हो जायगी।

भील : मुसीबत होगी तो हो जाय। मैं कर्ज़ लूंगा तो कुंए की मरम्मत कराऊंगा, गायें खरीदूंगा।

मुखिया : (क्रोध में) तुम्हारा इस गांव में रहना मुश्किल हो जायगा, समझे।

उद्घोषक : लेकिन वाह रे मनजी भील। मुखिया की चुनौती से वह जरा भी नहीं घबराया। उसने पैसे का प्रबन्ध किया, पर उससे कुंआ ठीक किया, अच्छा

बीज खरीदा, बोया और बढ़िया फसल पैदा की। जिन्होंने उसे चुनौती दी थी, वही उसके पराक्रम से गद्‌गद हो गये। वह पिछड़ी जाति का था, पर उसे अन्तर का प्रकाश मिला और वह मुसीबत से बच गया। ऐसी बीसियों मिसालें हैं।

[हर्षसूचक वाद्य-ध्वनि]

उद्‌घोषक : भारतीय संविधान के ३३९वें अनुच्छेद के अनुसार राष्ट्रपति ने २८ अप्रैल १९६० को कांग्रेस के भूतपूर्व अध्यक्ष श्री ढेबर की अध्यक्षता में एक कमीशन की नियुक्ति की थी। उसका काम अनुसूचित जातियों की स्थिति की जांच करके उनकी समस्याओं पर अपनी रिपोर्ट देना था। इस कमीशन ने देश के विभिन्न भागों में फैली हुई इन आदिमजातियों की समस्याओं का सब पहलुओं से अध्ययन करके अपनी विस्तृत रिपोर्ट पेश कर दी।

[वाद्य-ध्वनि]

पुरुष-स्वर १ : पर अस्पृश्यता-निवारण की भांति यह समस्या भी बड़ी कठिन है। हर्ष की बात है कि सारे देश का ध्यान उस ओर चला गया है।

पुरुष-स्वर २ : यह समस्या एक दिन सुलझकर ही रहेगी। कोई भी समाज अथवा जाति पिछड़ी नहीं रहेगी, लेकिन आवश्यकता इस बात की है कि आदिम जातियों के लिए जो कुछ किया जाय, उसमें उनके स्वाभिमान की रक्षा हो।

स्त्री-स्वर १ : राष्ट्रपति डॉ० राजेन्द्रप्रसाद ने ठीक ही कहा था :

राजेन्द्र प्रसाद : "हम यह भावना लेकर उनके पास न जायं कि हमें उनका उद्धार करना है। सेवक की विनम्रता इस काम के लिए बड़ी जरूरी है।"

पुरुष-स्वर १ : यह भी जरूरी है कि उनकी कला और संस्कृति की विशेषता को भी हानि न पहुंचे। उनसे भारतीय कला और संस्कृति का भंडार समृद्ध होगा।

पुरुष-स्वर २ : उनके पर्व और त्योहार हमें एक नये प्रकार का रस देंगे। भारतीय जीवन उनसे और भी श्रीसम्पन्न बनेगा।

उद्घोषक : देश अपनी मंजिल पर बराबर बढ़ता जा रहा है, बढ़ता जा रहा है। उसके मार्ग में कठिनाइयां हैं, पर जिस प्रकार नदी की धारा चट्टानों की बाधा से अधिक प्रखर बनती है, उसी प्रकार हमारे मार्ग की बाधाएं हमारी गति को अधिक तीव्र बनाने में ही सहायक होंगी।

पुरुष-स्वर १ : उपनिषद् में कहा गया है कि बैठे हुए का भाग्य बैठा रहता है, खड़े होनेवाले का सौभाग्य खड़ा हो जाता है, पड़े रहनेवाले का सौभाग्य पड़ा रहता है और उठकर चलनेवाले का सौभाग्य चल पड़ता है। इसलिए चलते रहो, चलते रहो।

स्त्री-स्वर १ : देश की चेतना ने इस सत्य को भलीभांति समझ लिया है और सारे देशवासी लोक-कल्याण के लक्ष्य की ओर कदम-से कदम मिलाकर बढ़ते जा रहे हैं, बढ़ते जा रहे हैं।

[सामूहिक कदमों का आभास और कोई उपयुक्त सामूहिक गान] •

११ : गांधीजी का अनशन-योग

[वातावरण की गंभीरता और व्याकुलता को व्यक्त करने के लिए वाद्य-स्वरों के उतार-चढ़ाव, मानो कोई अप्रत्याशित घटना हुई हो ।]

पुरुष-स्वर १ : (विस्मययुक्त चिन्ता से) आपने सुना ? गांधीजी ने सात दिन के उपवास की घोषणा की है ।... यह भी कहा है कि उसके बाद साढ़े चार महीने तक दिन में केवल एक बार भोजन करेंगे ।

पुरुष-स्वर २ : (व्यथित भाव से) जी हां, मैंने सुना है । ऐसी बातें भला कहीं छिपी रहती हैं ! फिनिक्स के बच्चे-बच्चे को इसका पता लग गया है । पर गांधीजी ने यह किया क्या है ? ऐसा करते हमने पहले तो कभी किसी को सुना नहीं । (अतिशय व्यग्रता) ओफ, कितना दुबला-पतला शरीर है, उनका ! इतने भारी बोझ को कैसे उठा पायेगा !

स्त्री-स्वर १ : (कांपते हुए) यही मैं सोचती हूं । कितना कठिन है बिना कुछ खाये सात दिन तक रहना । भगवान् करे, इस अग्नि-परीक्षा से वह अच्छी तरह पार हो जायें ।

पुरुष-स्वर १ : (संभलकर) लेकिन एक बात मेरी समझ में नहीं आयी। यह क्या कि गलती करे कोई और दण्ड भुगते कोई ! बुराई की आश्रम के एक लड़के और लड़की ने, किन्तु अनशन कर रहे हैं गांधीजी।

स्त्री-स्वर : इसमें समझ में न आनेवाली बात क्या है ! गांधीजी ने स्वयं ही इसका जवाब दिया है। उनका कहना है कि अपने संरक्षण में रहनेवालों की बुराई के लिए अभिभावक अथवा शिक्षक की भी तो जिम्मेदारी होती है। उनकी बात बिल्कुल ठीक है। अपने ही घर में देख लो न ! कुछ भी होता है तो बात किस पर आकर पड़ती है ? घर के मुखिया पर। आश्रम में जो हुआ, उसमें गांधीजी को अपनी जिम्मेदारी दिखायी दी।

पुरुष-स्वर २ : उन्होंने यह भी तो कहा :

गांधीजी : "इस पतन के लिए मेरे प्रायश्चित्त करने पर ही पतित होनेवालों को मेरे दुःख की प्रतीति होगी और इससे उन्हें अपने दोष का भान और अनुमान होगा।"

[वाद्य-ध्वनि]

पुरुष-स्वर १ : उनका यह कथन बहुत सही है :

गांधीजी : "जहां शुद्ध प्रेम का बन्धन होता है, वहां की एक बुराई से दूसरे को गहरी चोट लगती है, और जहां एक का दूसरे के लिए आदर-भाव होता है, वहां इस प्रकार का कदम अकारथ नहीं जाता।"

उद्घोषक : यह था गांधीजी का प्रथम उपवास, जो उन्होंने

सन् १९१३ में फिनिक्स आश्रम में किया था। आश्रम के एक छात्र और छात्रा के नैतिक पतन के पीछे, शिक्षक और आश्रम के मुखिया के नाते, उन्हें अपनी जिम्मेदारी दिखायी दी। उन्होंने कहा :

गांधीजी : "मुझमें पाप न होता तो ऐसे पापी के पाप मैं क्यों न देख सकता ? पत्थर और हीरे का भेद जौहरी न कर सके तो वह जौहरी कैसा ? मैं जिस व्यक्ति को अपना मानता हूं, अपने हृदय का प्रतिबिम्ब समझता हूं, उसमें यदि असत्य है तो मुझमें भी असत्य होना ही चाहिए।"

स्त्री-स्वर १ : जी हां, यही थी उनकी मनोभूमिका, यही थी उनकी मान्यता, जिसने प्रायश्चित्त के रूप में उन्हें अपने प्राणों की बाजी लगा देने के लिए प्रेरित किया। फिर क्या था, उनके हृदय में जो ज्वाला धधक रही थी, वह शान्त हो गयी।

पुरुष-स्वर १ : (संतोष से) उनका मन बहुत ही हल्का हो गया।

पुरुष-स्वर २ : और दोषियों पर जो क्रोध आया था, जो खीज हुई थी, वह दूर हो गयी।

स्त्री-स्वर १ : उन पर शेष रही दया और करुणा।

[सन्तोषबोधक वाद्य-ध्वनि। फिर कुछ देर स्तब्धता। अनन्तर हर्ष-सूचक वाद्य-ध्वनि के उतार-चढ़ाव]

उद्घोषक : शुद्ध हृदय से किये गए प्रायश्चित्त का परिणाम मंगलकारी ही होना था। प्रभु की कृपा से अनशन अच्छी तरह पूर्ण हुआ। उसने सारे फिनिक्स में तहलका अवश्य मचा दिया, लोगों को उससे कष्ट भी हुआ, लेकिन उससे वातावरण की

मलिनता दूर हो गयी, उसमें निखार आ गया।

स्त्री-स्वर १ : उसने लोगों की आंखें खोल दीं।

पुरुष-वर १ : लोगों की यह भी समझ में आ गया कि आदमी को बुराइयों का गुलाम नहीं होना चाहिए। इन्सान को परमेश्वर ने गड्ढे में गिरने के लिए नहीं बनाया। जीवन का उद्देश्य ऊंचाई पर जाना है।

पुरुष-स्वर २ : उनके अनशन ने लोगों के हृदय में उत्कट भावना पैदा की कि वे अपनी बुराइयों को देखें और उन्हें जीतने की कोशिश करें।

उद्घोषक : इस प्रकार गांधीजी के इस उपवास ने लोगों के दिलों पर गहरा प्रभाव डाला। उनमें अंतर्मुखी होने और अपने जीवन को ऊर्ध्वगामी बनाने की भावना प्रबल हुई। पर गांधीजी की यह कसौटी अंतिम कसौटी नहीं थी। उन्हें बाद के अपने जीवन में कई बार उपवास करने पड़े।

पुरुष-स्वर १ : सत्य के मार्ग पर ज्यों-ज्यों उनके चरण बढ़ते गये, आत्मा की निर्मलता और ईश्वर के सान्निध्य की महिमा उनके हृदय में स्पष्ट होती गयी। सत्याग्रह के शस्त्रागार का उन्होंने अनशन एक अमोघ अस्त्र माना।

पुरुष-स्वर २ : पर वह सबके लिए अमोघ नहीं हो सकता था।

स्त्री-स्वर १ : उसका उपयोग सफलतापूर्वक वही कर सकता था, जिसकी भूमिका नैतिक और आध्यात्मिक हो।

पुरुष-स्वर १ : उन्होंने कहा था :

गांधीजी : "केवल शारीरिक योग्यता उपवास के लिए कोई

योग्यता नहीं है। यदि ईश्वर में जीती-जागती श्रद्धा की योग्यता न हो तो दूसरी योग्यताएं बिल्कुल निरुपयोगी हैं। उपवास अंतरात्मा की गहराई में से उठाना चाहिए।"

स्त्री-स्वर २ : उनके उपवास किसी महान् ध्येय के लिए होते थे।

पुरुष-स्वर १ : उनका हृदय निर्मल रहता था। किसी के भी प्रति दुर्भावना नहीं होती थी।

स्त्री-स्वर १ : तभी तो उनके उपवासों का इतना गहरा असर होता था।

पुरुष-स्वर २ : उनके उपवास से सारा देश व्याकुल हो उठता था।

उद्घोषक : गांधीजी ने जितने उपवास किये, उनका उद्देश्य भले ही प्रायश्चित्त करना हो अथवा अन्याय का निराकरण करना, उनकी भूमिका सदा नैतिक और आध्यात्मिक ही रही।

पुरुष-स्वर १ : भारत में सबसे पहला अनशन उन्होंने सन् १९१८ में किया, जो तीन दिन तक चला। अहमदाबाद की मिल के मजदूरों ने महंगाई-भत्ता बन्द कर दिये जाने पर, गांधीजी की सलाह से, हड़ताल की थी, लेकिन आगे चलकर मजदूर डिगने लगे। यह देखकर गांधीजी ने उनकी एक सभा में उपवास की घोषणा कर दी। मजदूरों को इसकी कल्पना भी नहीं थी। उपवास की घोषणा सुनकर वे दंग रह गये।

[भीड़ के स्वर, उत्तेजित वातावरण]

मजदूर १ : हम आपको उपवास नहीं करने देंगे।

मजदूर २ : उपवास आप नहीं, हम करेंगे।
[भीड़ में उत्तेजना बढ़ती है]

अनेक स्वर : (एक साथ) आप हमें क्षमा कीजिये। अपनी प्रतिज्ञा से हम पीछे नहीं हटेंगे, उस पर अडिग रहेंगे।

उद्घोषक : लेकिन गांधीजी नहीं माने, उन्होंने उपवास आरम्भ कर दिया। पर इस उपवास में शीघ्र ही उन्हें एक दोष दिखायी दिया। मिल-मालिकों के साथ उनका बड़ा मधुर सम्बन्ध था। इसलिए उपवास उन पर बिना प्रभाव डाले नहीं रह सकता था। उनके विरुद्ध उपवास करना बल-प्रयोग गिना जाता। फिर भी गांधीजी ने सदा उपवास करना अपना धर्म माना।
[वाद्य-ध्वनि। थोड़ा विराम]

उद्घोषक : यह उपवास भी सकुशल पूरा हुआ। उसके फलस्वरूप वातावरण सुधरा और प्रेममय बना।

स्त्री-स्वर १ : लेकिन जिस अनशन ने सारे देश पर आश्चर्यजनक प्रभाव डाला, वह था सन् १९२४ का इक्कीस दिन का उपवास।

पुरुष-स्वर १ : ओफ, बड़े तूफानी दिन थे वे। देश की स्थिति बड़ी नाजुक हो गयी थी। हिन्दू-मुसलमानों के बीच चौड़ी खाई हो गयी थी।

स्त्री-स्वर २ : लोग एक-दूसरे के प्राणों के ग्राहक बन गये थे। चारों ओर भयंकर दंगे हो रहे थे।

पुरुष-स्वर २ : मानवता के अनन्य प्रेमी गांधीजी को इससे ठेस लगना स्वाभाविक ही था। मानव मानव का

हनन करनेवाली घटनाएं उन्हें असह्य प्रतीत हुईं। पर वे क्या करें? मनुष्य का इतना भयंकर, इतना विकृत रूप उन्होंने पहले कभी नहीं देखा था।

स्त्री-स्वर १ : उन्होंने मार्ग खोजा, पर नहीं मिला। सहसा उन्होंने अनुभव किया कि जब किसी के सम्मुख कोई संकट उपस्थित हो और वह उसे हटा न सके तो उसे उपवास और प्रार्थना करनी चाहिए। उन्होंने इसी मार्ग का अवलम्बन किया। उन्होंने इक्कीस दिन के उपवास की घोषणा कर दी।

[जोर की वाद्य-ध्वनि]

उद्घोषक : उनके इस निश्चय से सारा देश कांप उठा।

पुरुष-स्वर १ : भारतीय नेता व्याकुल हो उठे।

पुरुष-स्वर २ : भारत के करोड़ों नर-नारी विह्वल होकर गांधीजी के स्वास्थ्य और दीर्घायु के लिए प्रार्थना करने लगे।

स्त्री-स्वर १ : और ब्रिटिश सरकार भी चिन्तित हो उठी।

उद्घोषक : उपवास समाप्त करने के लिए गांधीजी से बहुत आग्रह किया गया, लेकिन वे अपने निश्चय पर अटल रहे। उनकी अवस्था बीच में बड़ी चिन्ता-जनक हो गयी, फिर भी वे अवधि से पहले उपवास छोड़ने को राजी न हुए। नेताओं के दिल कांपते थे, जनता का दिल उमड़ता था—कहीं कोई अनहोनी घटना न घट जाय! पर गांधीजी के मन में किसी प्रकार की चिन्ता न थी, उनके हृदय में पूर्ण शान्ति थी। आखिर

उपवास समाप्त हुआ, देश ने चैन की सांस ली।

पुरुष-स्वर १ : इस उपवास का फल यह निकला कि देश का पागलपन-भरा उन्माद दब गया।

स्त्री-स्वर : तूफान शान्त हो गया, दंगे बन्द हो गये।

पुरुष-स्वर २ : नेताओं ने आश्वासन दिया कि वे लोगों के फटे दिलों को एक करने के लिए, दूसरे सारे काम छोड़कर, जी-जान से, प्रयत्न करेंगे।

स्त्री-स्वर १ : उसके बाद देश में भाईचारे के जो दृश्य देखे गये, उनकी स्मृति बड़ी मधुर थी।

उद्घोषक : पर इस इक्कीस दिन के उपवास के बाद बड़ा ही भयंकर तूफान आया सन् १९३२ में, जबकि ब्रिटिश सरकार द्वारा दलित-वर्ग को पृथक् निर्वाचन का अधिकार दिये जाने के विरुद्ध उन्होंने आमरण अनशन आरम्भ किया, यह उपवास आठ दिन चला और पूना-पैक्ट होने पर समाप्त हो गया। बहुत-से लोगों ने उपवास के औचित्य पर सन्देह प्रकट किया।

पुरुष-स्वर १ : उन्हें उत्तर देते हुए गांधीजी ने कहा :

गांधीजी : "ज्ञान और तप के लिए उपवास करने की प्रथा सनातन काल से चली आ रही है। ईसाइयों और इस्लाम में भी इसका साधारणतया पालन किया जाता है और हिन्दू-धर्म तो आत्मशुद्धि के लिए किये गए उपवासों के उदाहरणों से भरा पड़ा है।"

पुरुष-स्वर २ : उन्होंने यह भी कहा :

गांधीजी : "मैंने आत्म-शुद्धि की बड़ी चेष्टा की है और

उसका नतीजा यह हुआ है कि मुझे अन्तर्नाद को ठीक-ठीक और साफ-साफ सुनने की क्षमता प्राप्त हो गयी है। मैंने यह प्रायश्चित्त उस अन्तर्नाद की आज्ञा के अनुसार किया है।"

स्त्री-स्वर : लोगों ने कहा—' उपवास तो दूसरों को धमकाना है।"

पुरुष-स्वर १ : गांधीजी ने उत्तर दिया :

गांधीजी : "प्रेम विवश करता है, धमकाता नहीं है।"

उद्घोषक : इस तरह एक के बाद एक बहुत-से उपवासों की शृंखला गांधीजी के जीवन में मिलती है। कभी अस्पृश्यता-निवारण के लिए अनशन किया तो कभी जेल में भंगी का काम मांगने और जेल के अधिकारियों के इनकार कर देने पर किया; कभी आत्म-शुद्धि के लिए किया तो कभी प्रायश्चित्त के रूप में।

पुरुष-स्वर १ : आगे चलकर तो ऐसी स्थिति पैदा हो गयी कि जरा-सी कोई बात होती कि सारा देश व्यग्र हो उठता, कहीं बापू उपवास न कर बैठें।

स्त्री-स्वर १ : और लोग हृदय से प्रार्थना करते कि और कुछ भले हो जाय, लेकिन बापू उपवास न करें।

उद्घोषक : लोगों के अन्तःकरण की इस प्रार्थना के बावजूद बापू के समक्ष आगाखां महल में नजरबन्दी के दिनों में इक्कीस दिन का उपवास करने की लाचारी आ गयी। सन् १९४२ में जो हिंसात्मक प्रवृत्तियां देश में हुई थीं, उनके लिए सरकार ने गांधीजी और कांग्रेस को जिम्मेदार ठहराया। गांधीजी के लिए यह असह्य हुआ।

पुरुष-स्वर १ : गांधीजी उन दिनों बहुत दुर्बल थे। लोगों को डर हुआ कि कहीं इस बार का उपवास उनके लिए घातक न हो।

स्त्री-स्वर १ : लेकिन जिसका रक्षक भगवान् होता है, उसे कौन मार सकता है।

पुरुष-स्वर २ : गांधीजी इस अग्नि-परीक्षा में भी उत्तीर्ण हुए।

उद्घोषक : पर अभी उनकी अंतिम परीक्षा बाकी थी। देश स्वतन्त्र हुआ, किन्तु दुर्भाग्य से चारों ओर घोर अशांति पैदा हो गयी। देश के बंटवारे ने लोगों के दिलों को भी टूक-टूक कर दिया, उनमें एक वार पुनः साम्प्रदायिक वैमनस्य की दुर्भावना उत्पन्न हो गयी। जगह-जगह पर दंगे हुए।

पुरुष-स्वर १ : उस समय गांधीजी शांति-दूत के रूप में एकाकी नोआखाली में पैदल घूम-घूमकर लोगों को प्रेम और शांति का सन्देश सुना रहे थे।

स्त्री-स्वर १ : तभी उन्हें दिल्ली और पंजाब से दिल दहलाने-वाले समाचार प्राप्त हुए। आग की लपटों को शान्त करने के लिए वह दिल्ली के लिए रवाना हुए।

पुरुष-स्वर २ : वह कलकत्ता आये, अकस्मात् वहां दंगे हो गये।

स्त्री-स्वर १ : गांधीजी की वेदना इतनी घनीभूत हो गयी कि उन्होंने अनिश्चित समय के लिए उपवास आरम्भ कर दिया।

पुरुष-स्वर १ : वह उपवास ७३ घंटे चला, लेकिन उसने चमत्कार कर दिखाया। कलकत्ता में पूर्ण शांति स्थापित हो गयी।

स्त्री·स्वर १ : (व्यथित भाव से) और तव गांधीजी वहां से रवाना होकर दिल्ली आये।

[वाद्य-ध्वनि]

उद्घोषक : हां, दिल्ली आये—उस दिल्ली में, जो पारस्परिक विद्वेष से अंधी हो रही थी और साम्प्रदायिक उन्माद की लपटों में धू-धू करके जल रही थी। गांधीजी ने अपने प्राणों को दांव पर लगा दिया। उनका यह अंतिम उपवास था, जो पांच दिन तक चला। दिल्ली की ज्वाला शांत हो गयी, तूफान पर पर्दा पड़ गया; पर इसके कुछ दिन बाद ही जो न होना था, वह हो गया। सन् १९४८ की ३० जनवरी को वापू से सदा के लिए, विछोह हो गया।

[शोकसूचक वाद्य-ध्वनि]